कुरुक्षेत्र

अगस्त 1993

तीन रुपये

विकास की राहें:
ग्रामीण सड़कें

73वें संविधान संशोधन अधिनियम के अंतर्गत कानून बनाने के लिए राज्यों की सहमति

संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम, 1992 के बारे में राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों के प्रभारी पंचायत मंत्रियों और सचिवों का सम्मेलन जुलाई के पहले सप्ताह में नई दिल्ली में हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन प्रधानमंत्री श्री पी0वी0 नरसिम्हराव ने किया और अध्यक्षता केन्द्रीय ग्रामीण विकास राज्य मंत्री श्री रामेश्वर ठाकुर ने की। सम्मेलन में इस बात पर सहमति हुई कि संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम 1992 के फलस्वरूप जिन नये कानूनों को बनाने की जरूरत है उनके विधेयकों को संबंधित राज्यों की विधान सभाओं के अगले सत्र में प्रस्तुत किया जायेगा। सम्मेलन में निम्नलिखित बातें स्वीकार की गईं:

1. ग्राम पंचायतों के स्तर पर चुनाव गैर दलीय आधार पर करायें जायें।
2. स्थानीय झगड़ों को शीघ्र और कम खर्च पर निपटाने के लिए न्याय पंचायतों की भूमिका उपयुक्त मानी गई। यह सुझाव रखा गया कि इन्हें राज्यों के प्रस्तावित पंचायती राज कानून में शामिल किया जाये अथवा उनके लिए अलग से कानून बनाया जाए।
3. सम्मेलन में इस बात पर भी सहमति हुई कि कार्यों और अधिकारों को सौंपते समय शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला एवं बाल विकास पोषाहार और परिवार कल्याण जैसी सेवाओं को इस तरह शामिल किया जाये कि उनमें स्थानीय जनता की भागीदारी अधिक से अधिक हो और स्थानीय जनता को उनका लाभ मिले।
4. पंचायती राज संस्थाओं में जिला और तहसील स्तर पर समितियों/स्थायी समितियों की प्रणाली को उपयोगिता के आधार पर कानून में शामिल किया जा सकता है।
5. राज्य स्तरीय वित्त आयोगों में प्रतिष्ठित और अनुभवी व्यक्तियों को शामिल किया जाये ताकि पंचायतों को पर्याप्त मात्रा में धन उपलब्ध हो सके।
6. पंचायती राज मंत्रियों की समिति की समय-समय पर विभिन्न राज्यों में बैठक की जाए ताकि अनुभवों तथा विचारों का आदान-प्रदान किया जा सके।
7. पंचायत प्रणाली के बारे में लोगों को जागरूक बनाने के लिए स्थानीय भाषा की प्रचार सामग्री का वितरण किया जाये और पंचायती राज प्रणाली के प्रत्येक स्तर पर कार्यरत सभी कर्मियों को समुचित प्रशिक्षित किया जाये ।
8. संसदीय चुनावों में प्रयुक्त होने वाली मतदाता सूचियों का प्रत्येक राज्य पंचायत चुनावों के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है। सम्मेलन में यह विचार भी रखा गया कि संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम में आदेशात्मक प्रावधानों को राज्य कानूनों में शामिल कर दिया जाये।

प्रस्तुति : ललिता जोशी

वर्ष 38 अंक 10 श्रावण -भाद्रप्रद 1915, अगस्त 1993

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य, चित्र आदि भेजिए। लघु कथाओं का भी स्वागत है। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

संपादक : राम बोध मिश्र
सह संपादक : बलदेव सिंह मदान
उप संपादक : ललिता जोशी

उप निदेशक (उत्पादन) : एस.एम. चहल
विज्ञापन प्रबंधक : बैजनाथ राजभर
सहायक व्यापार व्यवस्थापक : एडवर्ड बेक
आवरण सज्जा : आर0 के0 टंडन

एक प्रति : तीन रुपये, वार्षिक चंदा : 30 रुपये
फोटो साभार : रमेश चन्द्र, फोटो प्रभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय

अनुक्रम

विकास में ग्रामीण सड़कों का महत्व 2
नवीन पंत
ग्रामीण सड़कें 5
प्रदीप पंत
आर्थिक विकास पर नयी आर्थिक नीति का प्रभाव 7
डा0 सुरेश चन्द जैन
ग्रामीण सड़कें : बुनियादी सुविधा का आधार 9
आर्येन्द्र उपाध्याय
अतिक्रमण (कहानी) 11
दुर्गेश
उत्तर प्रदेश में सड़कें 13
सुरेश सिंह
सामाजिक परिवेश में नारी की भूमिका 16
डा0 आनन्द तिवारी
बिहार के विकास की द्योतक: ग्रामीण सड़कें 17
किरण गुप्ता
ग्रामीण क्षेत्रों में रोशनी का सफर 20
ममता
ग्रामीण महिलाओं के विकास के उपाय 22
डा0 विमला उपाध्याय
पंजाब में रोजगार और भविष्य की संभावनाएं 24
गिरीश नौटियाल
ग्रामीण जनसंख्या का स्वरूप और विकास समस्याएं 26
डा0 बी0एल0 नागदा
नीम हकीम है 29
चन्द्रकान्ता शर्मा
भारतीय कृषि और डुंकेल प्रस्ताव 30
ओ0 पी0 शर्मा
बायोगैस : राष्ट्र की अमूल्य निधि 34
डा0 हिमांशु शेखर एवं डा0 अजय श्रीवास्तव
ग्रामीण कार्यक्रमों हेतु नई योजना 37
डा0 अजय जोशी
श्रमिक महिलाओं की समस्याएं व सामाजिक दायित्व 38
अजय कुमार बरनवाल

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें। दूरभाष : 384888

विकास में ग्रामीण सड़कों का महत्व

✍ नवीन पंत

अर्थव्यवस्था के विकास में सड़कों के योगदान के महत्व को प्राचीन काल से ही स्वीकार किया जाता है। सड़कों के विस्तार के साथ ही मानव-सभ्यता का प्रचार और प्रसार हुआ है। सड़कें व्यापार का विस्तार करती हैं। ज्ञान विज्ञान की ज्योति नए क्षेत्रों में फैलाती हैं। अपरिचितों को मित्र बनाती हैं और सुख समृद्धि को बढ़ाती हैं।

प्राचीन काल से ही सड़कों का निर्माण राज्य के आवश्यक कर्तव्यों में समझा जाता है। यही कारण है कि प्राचीन राजा-महाराजा और नरेश सड़क-निर्माण की ओर विशेष ध्यान देते थे। कहा जाता है कि सम्राट अशोक ने अपने शासन-काल के दौरान अनेक सड़कों का निर्माण कराया था। इनमें राज्य के पश्चिमोत्तर क्षेत्र बल्ख (बुखारा) से कम्बोज, गांधार होते हुए बंगाल की खाड़ी के तट तक जाने वाली सड़क मुख्य थी। अशोक ने उत्तर भारत के गांगेय क्षेत्र में अनेक सड़कों का निर्माण कराया, इनमें से एक हिमालय के तराई क्षेत्र में होकर जाती थी। दो अन्य सड़कें गंगा और यमुना के किनारे-किनारे प्रयाग तक जाती थीं और वहां बल्ख से आने वाली सड़क से मिल जाती थीं। बनारस से दो सड़कें दक्षिण को भी जाती थीं। देश के पूर्वी और पश्चिमी तट पर समुद्र के किनारे-किनारे दो सड़कें बनाई गयी थीं। ये राज्य के प्रमुख मार्ग या आज की भाषा में राष्ट्रीय राजमार्ग थे।

इन सड़कों के किनारे छायादार वृक्ष लगाए जाते थे, हर दो कोस पर यात्रियों और उनके पशुओं के विश्राम करने के लिए आश्रय स्थल, कुएं, बावड़ी आदि बनाई जाती थीं। कुछ आश्रय-स्थलों पर सरकारी कारिन्दे भी रहते थे। इन्हीं सड़कों द्वारा देश के एक भाग की उपज दूसरे भाग में पहुंचती थी। यह उपज बैलगाड़ियों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाई जाती थी। प्राचीन काल में कभी कभी एक एक हजार तक बैलगाड़ियां साथ साथ यात्रा करती थीं।

सड़क निर्माण के इस कार्य को अन्य हिन्दू और मुसलमान नरेशों ने जारी रखा। इस प्रसंग में शेरशाह सूरी का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उसने न केवल पुरानी सड़कों की मरम्मत कराई बल्कि अनेक नई सड़कें बनवाईं। बाद में मुगल सम्राटों ने सड़क निर्माण की इस परम्परा को जारी रखा।

हिन्दुओं के प्रसिद्ध तीर्थ रामेश्वरम, मदुरै, बद्रीनाथ, पुरी, द्वारिका, सोमनाथ, मथुरा, वाराणसी देश के विभिन्न भागों में है। देश में इन स्थानों की यात्रा करने की एक अविछिन्न प्राचीन परम्परा है। इससे भी देश में सड़कों के निर्माण को बढ़ावा मिला।

ब्रिटिश शासन काल के दौरान देश के विभिन्न स्थानों पर सैनिक छावनियां बनाई गयीं। इन छावनियों को रसद, हथियार और गोला बारूद की सप्लाई के लिए अनेक सड़कें बनाई गईं। कुछ छावनियां देश के दूर दराज और दुर्गम स्थानों पर बनाई गयीं, इससे उन स्थानों का अन्य स्थानों के साथ सम्पर्क हुआ। अंग्रेज शासन के दौरान सड़क-निर्माण का काम योजनाबद्ध ढंग से हाथ में लिया गया।

तथापि देश की समग्र आवश्यकताओं को देखते हुए देश में बहुत कम सड़कें थीं। देश की राजधानी, प्रान्तों की राजधानी और जिला मुख्यालयों को जोड़ने वाली सड़कें तो बनाई गयीं लेकिन गांवों को कस्बों और शहर से जोड़ने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया।

सड़कें सामान और यात्रियों के परिवहन के लिए बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराती हैं और विकास की गति को तेज करती हैं। सड़कों के द्वारा किसान की उपज जल्दी मंडियों में पहुंचती है और उसके अच्छे दाम मिलते हैं। सड़कों के अभाव में किसान को उसकी खराब हो जाने वाली उपज के औने पौने मूल्य मिलते हैं।

लंबी दूरी के यातायात की आवश्यकता राष्ट्रीय राजमार्गों तथा राज्यों की सड़कों द्वारा पूरी की जाती है। राज्य के विभिन्न केन्द्रों को जोड़ने का कार्य जिला सड़कों द्वारा पूरा किया जाता है। जिले के विभिन्न गांवों को जिला सड़कों से जोड़ने और स्थानीय यातायात की आवश्यकता ग्रामीण सड़कों द्वारा पूरी की जाती है।

स्वतंत्रता के बाद देश में सभी किस्म की सड़कों का तेजी से विकास किया गया। हमारे योजना निर्माताओं ने प्रारम्भ से ही देश के समग्र विकास में सड़कों के महत्व को समझा और उसके लिए पर्याप्त धन राशि रखी।

विभिन्न पंचवर्षीय और वार्षिक योजनाओं के दौरान ग्रामीण सड़कों और आदिवासी क्षेत्रों की सड़कों के निर्माण के लिए काफी राशि रखी गयी। पिछली तीन पंचवर्षीय योजनाओं और तीन वार्षिक योजनाओं के दौरान सड़क निर्माण के लिए 1,121.58 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई। चौथी, पांचवीं और छठी पंचवर्षीय योजनाओं और एक वार्षिक योजना के दौरान सड़क निर्माण पर 5,160.09 करोड़ रुपये व्यय किए गए। सातवीं योजना के दौरान सड़क निर्माण पर 6179.75 करोड़ रुपये खर्च किए गए।

पिछले चार दशकों के दौरान देश में निर्मित विभिन्न प्रकार की सड़कों के आंकड़े इस प्रकार हैं :

सड़कों की लंबाई

हजार किलोमीटर

	1950-51	1960-61	1970-71	1980-81	1987-88	1990-91
1. राष्ट्रीय राजमार्ग	19.81	23.80	29.13	31.67	32.33	33.69
2. राज्यों के राजमार्ग	42.56	61.69	89.22	94.36	112.50	--
3. अन्य सड़कें (इनमें जिला सड़कें और ग्रामीण सड़कें शामिल हैं)	337.57	438.99	799.53	1365.27	1698.59	2069.5

स्रोत : आठवीं पंचवर्षीय योजना

इन आंकड़ों के अवलोकन से पता चलता है कि 1950-51 में देश में सभी तरह की 3 लाख 99 हजार 940 किलोमीटर लंबी सड़कें थीं। 1990-91 के अन्त में इन सड़कों की लंबाई 21 लाख 3 हजार 140 किलोमीटर हो गयी। इनमें राज्यों की सड़कों की सूचना नहीं है जो 1987-88 में 1 लाख 12 हजार 500 किलोमीटर थीं। इस अवधि में अन्य सड़कों की लंबाई जिनमें ग्रामीण सड़कें प्रमुख हैं, 3 लाख 37 हजार किलोमीटर से बढ़कर 20 लाख 69 हजार किलोमीटर हो गयी।

पिछले चार दशकों के दौरान क्षेत्र में सड़कों के विकास के लिए बहुत कुछ किया गया है तथापि, अभी भी इस क्षेत्र में बहुत कुछ किया जाना है। देश के लगभग एक तिहाई गांव अभी भी अच्छी पक्की सड़कों से नहीं जुड़े हैं। जो गांव पक्की सड़कों से जुड़े हैं उनका सम्पर्क भी पुल पुलियों तथा एकत्र पानी के कारण बरसात के दिनों में पक्की सड़कों से भंग हो जाता है। गांवों के समीप से गुजरने वाली थोड़ी ही सड़कें है जिन पर डामर लगा है। शेष, सड़कों को केवल नाम के लिए पक्की सड़कें कहा जा सकता है। एक अनुमान के अनुसार केवल खराब सड़कों के कारण देश को प्रति वर्ष लगभग 500 करोड़ रुपये की हानि उठानी पड़ती है। गांवों को मुख्य सड़कों से जोड़ने वाली बारहमासी सड़कों के अभाव और खराब सड़कों आदि के कारण ग्रामीणों को कितनी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष हानि होती है इसका अनुमान नहीं लगाया गया है । तथापि यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि यह हजारों करोड़ रुपये में होगी।

ग्रामीण सड़कों के अभाव में विकास कर्मचारी, अध्यापक, स्वास्थ्य कर्मचारी और कृषि कर्मचारी उन गांवों में रहना पसन्द नहीं करते जहां बारहमासी सड़कें नहीं हैं। अत: गांवों को विकास के लाभ नहीं मिल पाते। ऐसे गांव में किसानों को अपनी उपज, विशेष रूप से जल्दी खराब हो जाने वाली उपज, जैसे कि फल, सब्जी, दूध आदि मंडी पहुंचाने में बहुत अधिक खर्च उठाना पड़ता है। कभी कभी यह खर्च इतना अधिक होता है कि उससे उपज की लागत भी नहीं वसूल हो पाती। ऐसी स्थिति में किसान इस उपज को मंडी ले जाने की अपेक्षा गांव में बांट देना, फेंक देना या जानवरों का खिला देना पसंद करते हैं।

सातवीं योजना के अंतर्गत न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत 15 सौ या उससे अधिक जनसंख्या वाले सभी गांवों और 1000-1500 जनसंख्या वाले 50 प्रतिशत गांवों को सड़कों से जोड़ने का कार्यक्रम था। पर्वतीय, जनजातीय, रेतीले और समुद्र तटीय क्षेत्रों के लिए ये मानदंड कुछ शिथिल कर दिए गए थे। सातवीं योजना के दौरान प्रत्येक जिले में ग्रामीण सड़कों के विकास का 'मास्टर प्लान' तैयार किया गया और लगभग 25 हजार गांवों को सड़कों के साथ जोड़ा गया।

शेष पृष्ठ 36 पर

हमारे अन्य प्रकाशन

क्रिकेट सम्राट

अगस्त 1993 के प्रमुख आकर्षण

मध्य प्रदेश समग्र

म.प्र. का संपूर्ण परिचय; म.प्र. सामान्य ज्ञान वस्तुनिष्ठ; म.प्र. पी.सी.एस. 1992 का हल प्रश्न पत्र— इतिहास और भूगोल (वैकल्पिक विषय)।

राजस्थान समग्र

राजस्थान का संपूर्ण परिचय; राजस्थान सामान्य ज्ञान वस्तुनिष्ठ

प्रमुख आलेख

☐ बाघ परियोजना के दो दशक ☐ मानव विकास रपट 1993 ☐ स्पेशल 301 और भारत ☐ समान सिविल संहिता ☐ कम्बोडिया : अस्थिरता के दौर में भारतीय कला को समर्पित व्यक्तित्व राय कृष्ण दास ☐ यमुना मुक्ति अभियान

यू.डी.ए./एल.डी.ए. पर विशेष

सारांश लेखन; मॉडल प्रश्न पत्र; निबंध श्रृंखला—आतंकवाद के फैलते पांव; धर्म और राजनीति; पर्यावरण : पृथ्वी शिखर सम्मेलन का एक साल; भारतीय महिलाओं के समक्ष चुनौतियां

सिविल सेवा परीक्षा में सर्वोच्च स्थान प्राप्त अनिरुद्ध मुखर्जी का व्यक्ति परिचय

सफलता एवं परिश्रम के बीच की कड़ी

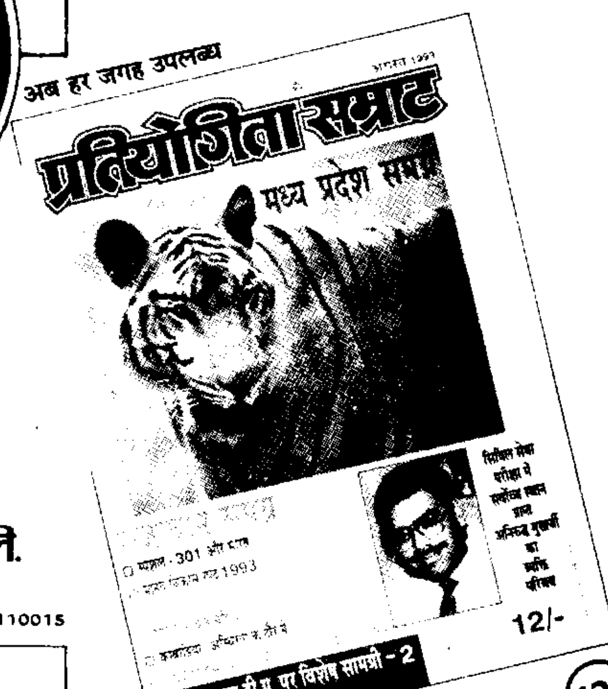

शुल्क :
प्रति अंक 12/-
वार्षिक 120/-
शुल्क भेजने का पता :

दीवान पब्लिकेशंज़ प्रा.लि.
L-1, कंचन हाउस, नजफगढ़ रोड
कमर्शियल कॉम्पलैक्स, नई दिल्ली-110015

पृष्ठ 132

12/-

प्रतियोगिता सम्राट

प्रतियोगिता जगत का संपूर्ण मासिक

INTERROCK ADVERTISING

ग्रामीण सड़कें

✍ प्रदीप पंत

यदि आपको बहुत जल्दी कहीं पहुंचना हो तो आप केवल आकाश मार्ग से यात्रा करके ही पहुंच सकते हैं। किन्तु इस मार्ग से यात्रा सिर्फ विमान करा सकते हैं और विमान सेवाएं हर कहीं के लिए उपलब्ध नहीं होतीं। समुद्री जहाजों की सेवाएं तो और भी सीमित हैं क्योंकि हर कहीं समुद्र नहीं है। नदी परिवहन भी वहीं संभव है जहां नदियां हों। आप बहुत सी जगहों तक रेलों द्वारा जा सकते हैं, किन्तु भारत में रेल पटरियों का विशाल जाल होते हुए भी हर जगह रेलवे स्टेशन नहीं है। खासतौर पर गांवों में तो रेलवे स्टेशन लगभग नहीं के बराबर है।

गांवों तक पहुंचने का एक मात्र रास्ता है-सड़कें। आज देश के छोटे छोटे गांवों तक को सड़कों ने जोड़ रखा है - फिर चाहे कच्ची सड़कें हों या पक्की, वे सामान्य मार्ग हों या राष्ट्रीय राजमार्ग।

कहना न होगा कि भारत दुनिया के उन गिने-चुने देशों में से है जहां सबसे अधिक सड़कें हैं, बल्कि कहना चाहिए कि सड़कों का जाल बिछा हुआ है। दरअसल सड़क मार्ग का विकास देश के व्यापक सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक विकास की बुनियाद है, क्योंकि जितनी अधिक सड़कें बनती हैं, उतना ही एक क्षेत्र दूसरे क्षेत्र के सम्पर्क में आता है और व्यापारिक कारोबार में वृद्धि होती है, विभिन्न क्षेत्र के लोग एक दूसरे से मिलते है, एक दूसरे को जानते-समझते हैं।

हमारे देश में सड़कों को चार वर्गों में विभाजित किया गया है, ये चार वर्ग हैं --

1. प्राथमिक सड़कें
2. सहायक और पूरक सड़कें
3. सीमावर्ती सड़कें
4. ग्रामीण सड़कें।

प्राथमिक सड़कों के अंतर्गत राजमार्ग आते हैं जिनकी व्यवस्था केन्द्र सरकार करती है। अनेक राष्ट्रीय राजमार्ग बड़े पुराने हैं जैसे जी.टी.रोड। लेकिन कई राष्ट्रीय राजमार्गों का निर्माण आजादी के बाद हुआ। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार हमारे राष्ट्रीय राजमार्गों के अंतर्गत सड़कों की कुल लंबाई 33, 612 किलोमीटर है। सातवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत राष्ट्रीय राजमार्गों के लिए 891.75 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गयी थी। देश का करीब एक तिहाई यातायात राष्ट्रीय राजमार्गों पर होता है, हालांकि इनकी कुल लंबाई, देश की अन्य सड़कों की लंबाई का दो प्रतिशत ही है।

सहायक और पूरक सड़कों के अंतर्गत राज्यों के राजमार्ग और जिला स्तर की सड़कें आती हैं। इनकी देखरेख और निर्माण का दायित्व राज्य सरकारों का है।

भारत की सीमा बहुत बड़ी है। सीमावर्ती कुछ क्षेत्र खासतौर पर उत्तरी और उत्तर पूर्वी इलाके सामरिक दृष्टि से बड़े नाजुक हैं। इन इलाकों में सड़क व संचार सुविधाओं का तेजी से विकास करने तथा इनके आर्थिक विकास में तेजी लानेऔर रक्षा तैयारियों को मद्देनजर रखते हुए मार्च 1960 में सीमा सड़क बोर्ड की स्थापना की गई। उधर सीमा सड़क संगठन जो भारतीय सेना का ही एक अंग है, भी सड़क निर्माण तथा उनके रख-रखाव में सक्रिय है। कुछ इलाकों में तो सम्पूर्ण मार्गों का निर्माण और व्यवस्था इसी संगठन के हाथों में है, जैसे जम्मू-कश्मीर में जम्मू से ऊपर कश्मीर के सारे इलाके के समस्त गांवों, शहरों, कस्बों में सड़कों का निर्माण और देखभाल यही संगठन करता है जो वहां बीकन के नाम से जाना जाता है।

भारत गांवों का देश है। आज भी देश की 70 प्रतिशत से अधिक आबादी गांवों में रहती है। अगर गांव पिछड़े हैं तो देश पिछड़ा है। यदि गांव आगे बढ़ते हैं तो देश आगे बढ़ता है। हमारी पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत ग्राम विकास को प्राथमिकता दी गयी। आजादी से पहले हमारे ज्यादातर गांव अलग-थलग पड़े हुए थे, लेकिन आजादी के बाद उन्हें एक दूसरे से जोड़ा गया। उनके व अन्य क्षेत्रों के बीच सम्पर्क स्थापित किया गया और इस काम को अंजाम देने में सड़कों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। सड़कों के कारण आज ज्यादातर गांवों तक बसें जाने लगी हैं। ट्रकों से गांवों में सामान ले जाना संभव हुआ है। गांवों में पैदा होने वाला अनाज और वहां बनाई जाने वाली कुटीर उद्योग की चीजें बिक्री के लिए दूसरी जगहों पर ले जाना सड़कों के फलस्वरूप ही संभव हो सका है। इसलिए कहना न होगा कि ग्रामीण सड़कों के विकास की देश के विकास में अहम भूमिका है।

अंग्रेजों ने देश के विकास के लिए जो कुछ किया था, वह सब अपने सीमित स्वार्थों के लिए किया था। उनका उद्देश्य था भारत के धन को अपने देश में ले जाना। इसलिए वे उन्हीं क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित रखते थे और उन्हीं इलाकों का विकास करते थे, जहां से उन्हें अपने इस उद्देश्य की प्राप्ति में मदद मिल सके। साथ ही उन्होंने इस बात पर भी ध्यान केन्द्रित किया कि देश के एक क्षेत्र और दूसरे क्षेत्र के बीच सम्पर्क न हो, ताकि लोग एकजुट न हो सकें। क्योंकि लोगों की एकजुटता अंग्रेज शासकों के लिए खतरा थी। यह एकजुटता जनसम्पर्क साधनों से सहज ही संभव हो जाती। मतलब यह कि यदि वे सड़कों आदि का ज्यादा विस्तार करते तो उनके लिए शासन करना मुश्किल हो जाता। इसलिए उन्होंने भारत के ग्रामीण क्षेत्र को आम तौर पर अलग थलग ही पड़ा रहने दिया। ग्रामीण सड़कों का विकास और विस्तार न हो पाने के फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों की प्रगति रुकी रही, वे पिछड़े रहे, बल्कि और पिछड़ते गए, वहां आवश्यकता की सभी वस्तुएं नहीं पहुंच पायीं और उद्योग धंधों की प्रगति के लिए कुछ न हो सका।

स्वाधीन भारत में ग्रामीण विकास को ध्यान में रखते हुए गांवों तक सड़कें ले जाने पर विशेष ध्यान दिया गया। ग्रामीण सड़कों का निर्माण न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा कमान एरिया विकास कार्यक्रम के तहत किया जाता है। यह मुख्य रूप से राज्यों का विषय क्षेत्र है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत ग्रामीण सड़क निर्माण पर बल दिया गया। सातवीं पंचवर्षीय योजना में लक्ष्य रखा गया कि दस साल के भीतर 500 से अधिक जनसंख्या वाले सभी गांवों तथा 200 से 500 के बीच जनसंख्या वाले 50 प्रतिशत गांवों को पक्की सड़कों से जोड़ दिया जायेगा। इस काम के लिए 1729.40 करोड़ रुपये की राशि आबंटित की गयी।

भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में से बहुत क्षेत्र ऐसे हैं जहां जनजातियां बड़ी संख्या में रहती हैं। इन जनजातियों की अपनी सांस्कृतिक और सामाजिक विशिष्टता को नष्ट किए बिना इनका विकास तथा इनके क्षेत्रों की प्रगति करना जरूरी है। किन्तु यह तभी संभव है, जब इन क्षेत्रों तक सड़कें पहुंचाई जा सकें। इस तथ्य को महसूस करते हुए जनजातीय क्षेत्रों में केन्द्र द्वारा प्रायोजित सड़क निर्माण की एक योजना को लागू किया गया। इसके अंतर्गत राज्यों को अनुदान सहायता के रूप में केन्द्र द्वारा धन राशि उपलब्ध कराई जाती है। यह कार्यक्रम छठी पंचवर्षीय योजना काल से आरंभ किया गया है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में जनजातीय अंचलो सड़क निर्माण के लिए 14 करोड़ रुपये की व्यवस्था की ग लेकिन अब इस काम पर केन्द्रीय आर्थिक योगदान को सी कर दिया गया है। कारण यह है कि जनजातीय अंचलों में स निर्माण बुनियादी तौर पर राज्य सरकारों का दायित्व है। बहरह जो भी हो, इतना तो है ही कि आजादी के बाद आदिवासी जनजातीय अंचल उतने अलग थलग नहीं रह गये हैं जितने वे आजादी से पूर्व थे। इसकी अच्छी मिसाल मध्य प्रदेश का ब क्षेत्र है। रामपुर से बस्तर के मुख्यालय जगदलपुर तक बेहत सड़क बनाई गयी है जिसकी विभिन्न शाखाएं आसपास के ग तक जाती हैं। फिर भी यह कहना उचित ही होगा कि अब बहुत सा जनजातीय क्षेत्र आम आबादी से अलग थलग पड़ा हु है क्योंकि उस तक अभी अच्छी सड़क व्यवस्था पहुंच नहीं स

ग्रामीण सड़क निर्माण के इन कार्यों के अतिरिक्त ग्राम विकास विभाग द्वारा भी सड़कें बनाने की दिशा में कुछ किया गया। विभाग ने उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, और राजस्थ के डाकू पीड़ित जिलों के विशेष समस्याग्रस्त क्षेत्रों अर्थात बीह में सड़कें बनाने की दिशा में कुछ कार्य किया है। इस क्षेत्र विकास हेतु गठित विशेष कार्यक्रम की सिफारिश पर कार्रवाई की गयी। इस हेतु धन का 50 प्रतिशत भाग केन्द्र सरक देती है और शेष 50 प्रतिशत सम्बद्ध राज्य सरकारों द्वारा जुटा जाता है। यह धन राशि वार्षिक आधार पर दी जाती है।

कुल मिलाकर हम देखते हैं कि आजादी के बाद हम ग्रामीण क्षेत्रों में प्रगति हुई है। वे देश के शेष भागों से पह की तरह सम्पर्क विहीन नहीं हैं। सामान्य दिनों से लेकर संक के किसी भी दौर तक गांवों में पहुंचना अब अपेक्षाकृत आस हो गया है। गांवों में रोजमर्रा की आवश्यक चीजों से लेक कोयला, उर्वरक, बढ़िया बीज, सीमेन्ट, इस्पात और इस्पात चीजें, लोहा और लोहे का सामान आदि पहुंचाना अब ज्या कठिन नहीं रह गया है क्योंकि ज्यादातर गांवों तक अब बसें जाने लगीं है और माल लादे हुए ट्रक भी पहुंचने लगे हैं। यह स गांवों तक सड़कें पहुंच जाने के परिणामस्वरूप ही संभव हो सक है। जैसे-जैसे गांवों तक अधिक से अधिक सड़कें पहुंच जायेंगी, वैसे वैसे गांव प्रगति की दौड़ में आगे आते चले जायें क्योंकि अंतत: सड़क निर्माण प्रगति की दिशा में एक ठो योगदान ही तो है।

सी2/31 ईस्ट आफ कैला
नई दिल्ली - 6

भारत के आर्थिक विकास पर नयी आर्थिक नीति का प्रभाव

✍ डॉ0 सुरेश चन्द जैन

आर्थिक विकास का लक्ष्य मौद्रिक आय में वृद्धि करना ही नहीं है, अपितु अर्थ व्यवस्था के अन्य क्षेत्रों में होने वाले विकास को भी इसमें सम्मिलित किया जाना है। आर्थिक विकास द्वारा ही सामाजिक, संस्थागत एवं संगठन संबंधी समस्त परिवर्तन लाये जा सकते हैं। जब देश में राष्ट्रीय एवं प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है तो इससे आर्थिक विकास माना जा सकता है। आय की वृद्धि से बचत को प्रोत्साहन मिलता है, फलस्वरूप पूंजी निर्माण एवं तकनीकी विकास में तेजी आती है। कुल मिलाकर यह कहने में अतिश्योक्ति न होगी कि मानव का सर्वांगीण विकास ही आर्थिक विकास है। वर्तमान प्रगतिशील युग में किसी देश के आर्थिक विकास का मापदण्ड उसकी औद्योगिक संरचना व प्रगति से तय किया जाता है। यही नहीं विकसित, विकासशील एवं पिछड़े हुए देशों का वर्तमान वर्गीकरण बहुत कुछ औद्योगीकरण की मात्रा व गति पर निर्भर होता है। यही कारण है कि विगत वर्षों से विश्व का प्रत्येक राष्ट्र विकास की आकांक्षा में समेटे हुए आर्थिक विकास को अपनी आर्थिक नीति-का प्रमुख लक्ष्य बना चुका हैं। अतएव देश के सुसंगठित आर्थिक विकास के लिए सुनियोजित एवं प्रगतिशील आर्थिक नीति की अत्यन्त आवश्यकता होती है। प्रस्तुत आलेख में नयी आर्थिक नीति का आर्थिक विकास पर क्या प्रभाव पड़ा इस पर विचार किया गया है।

आर्थिक नीति की पृष्ठभूमि

स्वतन्त्रता से पूर्व भारत अंग्रेजों के अधीन था और अंग्रेजों की शोषण नीति एवं भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रति उपेक्षात्मक नीति के कारण अर्थव्यवस्था डावांडोल हो गयी। स्वतन्त्रता के पश्चात आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए नियोजित प्रणाली अपनाई गई, जिससे विकास के द्वार खुले। जहां एक ओर देश की जनसंख्या के जीवन-स्तर में सुधार लाने के लिए उत्पादन को तीव्रगति से बढ़ाना आवश्यक था वहीं दूसरी ओर यह भी आवश्यक समझा गया कि आर्थिक नियोजन उस प्रकार हो, जिसमें सामाजिक न्याय तथा समानता का समुचित समावेश हो सके। मानव-जीवन में जिस प्रकार सुख-दुख होता है उसी प्रकार अर्थव्यवस्था में भी गतिशीलता और गतिहीनता की स्थिति उत्पन्न होती है। गतिहीनता को दूर करने के लिए समय-समय पर आर्थिक नीतियों के माध्यम से एक नयी दिशा प्रदान की जाती रही है। पंचवर्षीय योजनाओं एवं तीन वार्षिक योजनाओं के अन्तर्गत समुचित विकास के लक्ष्य रखे गये। सातवीं योजना के प्रारम्भ में प्रधानमंत्री स्व. राजीव गांधी ने आर्थिक नीति में नवीन प्रवृत्तियों का संचार किया जिसे नयी आर्थिक नीति के नाम से जाना गया। चूंकि इसी समय नयी आर्थिक नीति घोषित की गई जिसमें उद्योगों का विकास और उपभोक्ताओं को वस्तुएं प्रतियोगी आधार पर कम से कम मूल्य पर उपलब्ध हो सकें। इसके अलावा सरकार बेरोजगारी, निर्धनता, एवं असमानता के विरुद्ध संघर्ष जारी रखेगी तथा न्याय के साथ विकास का बुनियादी उद्देश्य एक निश्चित समय में प्राप्त हो, ऐसा प्रयास करेगी।

नयी आर्थिक नीति के तहत सार्वजनिक क्षेत्र को ऐसे कार्यों में लगाया जाएगा, जिन्हें निजी क्षेत्र द्वारा नहीं किया जा सकता। इसके साथ ही निजी क्षेत्र को भी विस्तृत किया जाएगा ताकि यह अपना विस्तार कर सकें। गैर-सरकारी क्षेत्र को अधिक विस्तृत क्षेत्र उपलब्ध कराने के दृष्टिकोण से नीति संबंधी परिवर्तन किए गए जिनका संबंध औद्योगिक लाइसेन्स नीति,आयात निर्यात नीति, राजकोषीय नीति, नियंत्रणों प्रतिबन्धों एवं प्रशासकीय नियमन प्रणाली की जटिलताओं को कम करना है। इस प्रकार गैर सरकारी क्षेत्र को प्रोत्साहन दिए जाने के फलस्वरूप दक्षता का पूर्णतर उपयोग कर उत्पादन एवं उत्पादकता में सुधार के अपेक्षित परिणाम प्राप्त होंगे।

आठवीं योजना के विकास लक्ष्य

आर्थिक विकास के प्रारूप में आठवीं पंचवर्षीय योजना काल में 6 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त करने का लक्ष्य रखा है। यह विकास दर गत दशक की अपेक्षा लगभग दुगनी कर दी गई है। इस विकास दर को प्राप्त करने के लिए 3,50,000 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है और योजना के पांच वर्षों में कुल पूंजी निवेश लगभग 6,45,000 करोड़ रुपये होगा। इसी संदर्भ में विशेष रूप से कमजोर वर्गों के लिए रोजगार के पर्याप्त अवसर जुटाये जायेंगे। इसके अतिरिक्त भोजन, कपड़ा, आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि उत्पादन, औद्योगीकरण, व्यापक बाजारों का निर्माण आदि प्रमुख लक्ष्य रखे गये।

योजनाकाल में बचत दर, पूंजी उपयोग की कुशलता तथा निर्यात और आयात में वृद्धि की आवश्यकता पर बल दिया गया है। सकल घरेलू उत्पादन के विकास की दर 6 प्रतिशत करने के अलावा कृषि विकास की दर 3 प्रतिशत और उत्पादन क्षेत्र की विकास दर 9 प्रतिशत रखी गयी है। विकास की दर इतनी ऊंची दरें न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति और गरीबी दूर करने के मूल उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उपयुक्त समझी गयी हैं।

वर्तमान नयी आर्थिक नीति

तेजी से बदलती हुई, आर्थिक दशाओं को देखते हुए यह महसूस किया जा रहा है कि अधिकतर नियंत्रण अब अनुपयोगी हो गये हैं। इसलिए, नयी आर्थिक नीति का उद्देश्य राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक परिवेश में परिवर्तनों के अनरूप नीति का पुन: निर्धारण करना है। नयी आर्थिक नीति के लक्ष्य इस प्रकार हैं : शीघ्र प्रगति करना, लाभकारी रोजगार में तेजी से वृद्धि करना, क्षेत्रीय वृद्धि में सहायता देना, उत्पादकता में सुधार लाना, निर्यात को प्रोत्साहित करना, तकनीकी स्तर को ऊंचा उठाना, अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में बने रहना, उद्योगों की लाइसेन्स प्रणाली को समाप्त करना, पूंजी, माल तथा कच्चे माल को सरल तरीके से प्राप्त करना, उद्यमियों को निर्णय करने की स्वतन्त्रता देना तथा विदेशी तकनीक को प्राप्त करना।

आर्थिक विकास के नये-नये आयामों में शासन ने सुस्पष्ट कार्यक्रम प्रारम्भ किए हैं, जैसे वित्तीय घाटे को कम करना, अनावश्यक खर्चों को समाप्त करना, विविध उद्योगों में विदेशी मुद्रा के निवेश के लिए स्वदेशी उद्योगों पर से नियंत्रण समाप्त करना आदि है। उपरोक्त सुधार का मूलभूत उद्देश्य त्वरित विकास, आधुनिकीकरण और प्रौद्योगिकी उन्नति के माध्यम से आर्थिक अर्थव्यवस्था में एक नई गति लाना तथा गरीबी और बेरोजगारी की समस्याओं से निपटने के लिए अपनी क्षमता में वृद्धि करना है। प्रधानमंत्री श्री पी.वी. नरसिंह राव ने अपने भाषण में कहा कि ''मुझे विश्वास है कि व्यापक घरेलू आम सहमति जो कि आर्थिक नीतियों के समर्थन में मौजूद है न केवल बनी रहेगी बल्कि और मजबूत होगी।''

मूल्यांकन एवं प्रभाव

आर्थिक नीतियों के अन्तर्गत अनेक प्रकार के अनावश्यक नियन्त्रणों को समाप्त कर दिया गया। इन नियंत्रणों से लाइसेन्स लेने में अनावश्यक विलम्ब होता था। इसका प्रभाव देशी और विदेशी दोनों प्रकार के विनियोगों पर अत्यन्त गंभीर पड़ रहा था, क्योंकि अफसरशाही, लालफीताशाही एवं राजनैतिक स्तर पर भ्रष्टाचार के कारण देशी तथा विदेशी विनियोक्ता विनियोग करने में हिचकते थे। परिणामस्वरूप विकास प्रक्रिया धीमी होती जा रही थी। अत: ऐसे परिवेश में नयी आर्थिक नीति का स्वागत किया जाना स्वाभाविक है।

भारतीय अर्थव्यवस्था के सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र कृषि की उपेक्षा उल्लेखित है कि जब राष्ट्रीय आय का लगभग 50 प्रतिशत जिस अर्थव्यवस्था में कृषि से प्राप्त होता हो और लगभग 70प्रतिशत से अधिक लोग कृषि से जीविका प्राप्त करते हों उस अर्थव्यवस्था के विकास के लिए बनायी गयी नयी आर्थिक नीति यदि कृषि क्षेत्र के प्रति मौन है तो यह अविवेकपूर्ण ही है। इसके अलावा दुग्धशालाओं एवं वनों पर आधारित उद्योगों के विकास पर न तो कोई नीति है और न ही इन पर प्रोत्साहन की कोई भावना है।

सार्वजनिक क्षेत्र उत्पादन में प्रगति नहीं कर पा रहे हैं। इसका प्रमुख कारण कुशल प्रबन्ध और साधनों के कुशल प्रयोगों का अभाव है। सार्वजनिक क्षेत्र जो आरक्षित थे उन्हें निजी क्षेत्रों के लिए सौंप दिया गया ताकि निजी क्षेत्र को अपनी कार्य कुशलता प्रदर्शित करने के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हो सकें। इस प्रकार निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र दोनों मिलकर कार्य करेंगे, जिससे अपनी कार्य-कुशलता सिद्ध करने का प्रयास कर सकें।

उच्च तकनीक के आयात को नयी आर्थिक नीति के अन्तर्गत केन्द्रीय महत्व प्राप्त है। यदि हम विदेशी तकनीक सहयोग पर ध्यान दें तो स्पष्ट होता है कि हम औद्योगीकरण की प्रारम्भिक अवस्था में आज भी हैं जिसका सीधा कुप्रभाव आर्थिक विकास पर पड़ रहा है।

उपसंहार

उपरोक्त विवेचन से ऐसा प्रतीत होता है कि यदि नयी आर्थिक नीति आंठवी पंचवर्षीय योजना के साथ सामंजस्य बनाये रखे, तो नि:संदेह यह कहा जा सकता है कि हम अपनी आर्थिक अर्थव्यवस्था का शीघ्र विकास करने में सक्षम होंगे। ऐसी स्थिति में प्रति व्यक्ति एवं राष्ट्रीय आय की सम्भावनाओं को ध्यान में रखते हुए यह नीति आर्थिक विकास एवं आर्थिक कल्याण के कार्यों में सहायक होगी।

प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग
डैनियलसन कालेज,
छिन्दवाड़ा (म0प्र0)

ग्रामीण सड़कें : बुनियादी सुविधा का आधार

आर्येन्द्र उपाध्याय

सड़क परिवहन के विकास ने राष्ट्रीय विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। भारत जैसे विशाल क्षेत्रफल वाले देश में, जहां आबादी का एक बड़ा हिस्सा आज भी गांवों में ही है, गांवों को गांवों से और गांवों को शहरों से सड़क मार्ग द्वारा जोड़ कर कृषि पर आधारित राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को और मजबूत बनाने के प्रयास पंचवर्षीय योजनाओं में किए जाते रहे हैं। गांवों को बुनियादी सुविधाएं मुहैया कराने के लिए सड़क निर्माण जैसे कार्यक्रम मुख्य रूप से पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान शुरू किए गए न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (मिनिमम नीड्स प्रोग्राम) के तहत किये गए हैं।

पांचवी पंचवर्षीय योजना में शुरू किए गए न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम में ग्रामीण सड़कों के निर्माण पर खासतौर से जोर दिया गया था। फिर छठी पंचवर्षीय (1980-85) में ग्रामीण सड़कों के निर्माण को प्रमुखता दी गयी। इस योजना में लक्ष्य रखा गया है डेढ़ हजार आबादी वाले सभी गांवों को और एक हजार से डेढ़ के बीच आबादी वाले 50 प्रतिशत से ज्यादा गांवों को सन् 1990 से पहले सड़कों से जोड़ दिया जाए। इस योजना लक्ष्य में पहाड़ी, तटीय, आदिवासी और रेगिस्तानी इलाकों को पूरे तौर पर शामिल किया गया। सन् 1987-88 के आखिर तक भारत को पांच लाख 92 हजार गांवों में से दो लाख 41 हजार गांवों यानी 41 प्रतिशत गांवों को सड़कों से जोड़ा गया था। अभी करीब तीन लाख गांवों तक और सड़कों का जाल बिछाया जाना बाकी है। केरल, हरियाणा और पंजाब के लगभग सभी गांव सड़क संपर्क से जुड़े हैं। लेकिन गुजरात में 74 प्रतिशत, आंध्र प्रदेश में 43 प्रतिशत, राजस्थान में 21 प्रतिशत और उड़ीसा में 15 प्रतिशत गांव ही सड़क के द्वारा जुड़े हुए हैं।

देश में सड़कों का जाल बिछाने के लिए रोड डेवलपमेंट प्लान (1981- 2000) तैयार किया गया था। इस योजना के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में 22 लाख 12 हजार किलोमीटर लंबी सड़कों का जाल बिछाया जाना था। इस योजना के तहत प्रयासों से सन् 2000 तक पांच सौ तक की आबादी वाले सभी गांवों को सड़कों से जोड़ दिये जाने की उम्मीद है। पहली पंचवर्षीय योजना में सड़क निर्माण के लिए 134 करोड़ रुपये का प्रावधान था, जो पांचवीं योजना में बढ़ाकर 1,353 करोड़ रुपये तक पहुंच गया और सातवीं पंचवर्षीय योजना में सड़क निर्माण संबंधी यही बजट 5,200 करोड़ रुपये का रखा गया।

गांवों को सड़कों से जोड़ने के कारण कई विकास कार्यक्रमों को तेजी से लागू करने में काफी सफलता मिली है। गांवों में रोजगार पैदा करने, कृषि व्यवस्था और तकनीक को समुन्नत बनाने, गांव गांव तक बिजली, पानी, शिक्षा और चिकित्सा व्यवस्था उपलब्ध कराने में सड़क संपर्क का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। देश के कई गांवों में सिर्फ प्राइमरी स्कूल तक ही शिक्षा व्यवस्था होने के कारण गांव के बच्चे आगे नही पढ़ पाते थे और अगर उन्हें पढ़ाई जारी रखनी हो तो दूसरे गांव, जहां मिडिल या सैकेंडरी तक स्कूल होते हैं, वहां जाना पड़ता। यह सुविधा भी सिर्फ उन्हीं गांवों में उपलब्ध थी जो परिवहन के किसी साधन से जुड़े थे। पर जैसे जैसे गांवों को सड़कों के माध्यम से जोड़ा गया, एक गांव दूसरे गांव, अपने पास के कस्बे, तहसील, शहर के करीब आते गए। जिन गांवों में सिर्फ प्राइमरी तक की शिक्षा व्यवस्था थी, सड़क परिवहन के साधनों के विकास से वहां मिडिल और सैकेण्डरी स्कूल खुलना शुरू हुए। जिन छात्रों को सिर्फ स्कूली शिक्षा पूरी करने के लिए शहरों की ओर जो पलायन करना पड़ता था, वह रुका और गांव कस्बों में ही उन्हें पढ़ाई की सुविधा मिली। इसी तरह गांवों में पर्याप्त चिकित्सा व्यवस्था न होने की वजह से ग्रामीण जनता को या तो बीमारी में ही दम तोड़ने को मजबूर होना पड़ता था या फिर तुरंत शहरों की ओर भागना पड़ता था। शहर के बड़े अस्पतालों में इलाज कराना गांव की निर्धन जनता के लिए संभव नहीं हो पाता। कई बार गांवों में हैजा, अतिसार, जैसी बीमारियां (महामारियां) फैलतीं पर उन गांवों तक तत्काल चिकित्सा व्यवस्था पहुंचाना संभव नहीं हो पाता था और ज्यादातर लोग इलाज के अभाव में दम तोड़ देते। पर आज छोटे-छोटे गांवों में प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र और प्रसूति गृह आदि खुल गए हैं जिससे ग्रामीणों को छोटी-छोटी बीमारियों के इलाज के लिए शहर की ओर नहीं भागना पड़ता है।

भारत के ज्यादातर गांवों को पीने के साफ पानी की समस्या का सामना काफी समय से करना पड़ा है। ज्यादातर गांवों में

पेयजल समस्या प्राकृतिक स्रोतों कुएं, तालाब, के सूख जाने से, उनमें पर्याप्त जल संचित नहीं होने या पानी पीने लायक नहीं होने से उत्पन्न होती है। जबकि कई स्थानों पर जल स्रोत इतने न्यून हैं कि वह पर्याप्त मात्रा में पानी नहीं दे सकते। इस बुनियादी समस्या से निपटने के लिए हर पंचवर्षीय योजना में गांवों को पेयजल उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया। इन योजनाओं में गांवों में हैंडपंप लगाने, तालाबों की सफाई करने, पेयजल के नमूनों की जांच करने जैसे कामों को प्राथमिकता दी गयी। सन् 1991-92 में केन्द्र सरकार ने गांवों को स्वच्छ पेयजल मुहैया कराने के लिए एक सर्वे कराया था। यह तय किया गया कि 1991-92 के आखिर में 75.41 प्रतिशत गांवों को स्वच्छ पेयजल मुहैया कराया जाये।

रोजगारोन्मुख कार्यक्रमों ने भी ग्रामीण सड़कों के निर्माण को सर्वोच्च प्राथमिकता दी क्योंकि जब तक गांवों तक पहुंचा ही नही जा सकेगा तो ये कार्यक्रम सफल कैसे होंगे ? इसके लिए ग्रामीण सड़क निर्माण के कार्यक्रमों के विभिन्न पहलुओं में तालमेल स्थापित करने की जरूरत महसूस की गयी। इसके अभाव में वांछित लक्ष्य हासिल नहीं हो पाते। पहाड़ी इलाकों के दूर-दराज क्षेत्रों वाले गांवों को भी सड़कों से जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है। उसमें साथ ही पर्यावरण संतुलन बनाए रखने पर भी जोर दिया गया है। इसी तरह दुर्गम पहाड़ी क्षेत्रों में जहां सड़क निर्माण संभव नहीं है वहां रोपवे बनाए जाने की बात है। कुछ राज्य सरकारों ने ग्रामीण सड़कों के निर्माण के लिए अतिरिक्त संसाधन जुटाए हैं। जैसे पंजाब और हरियाणा में मार्केट कमेटी फंड स्कीम, राजस्थान में कृषि उपज मंडी योजना के जरिए ग्रामीण सड़कों के निर्माण को महत्व दिया गया। आठवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण सड़कों के विकास और समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लक्ष्यों को हासिल करने के लिए ग्रामीण सड़कों की भूमिका पर ही ज्यादा जोर दिया गया है। इस कार्यक्रम के तहत 1981 की जनगणना पर आधारित एक हजार आबादी वाले सभी गांवों को सड़क मार्ग से जोड़ने और पिछड़े व आदिवासी इलाकों के गांवों को तेजी से एक दूसरे के करीब लाने का लक्ष्य रखा गया है। इसके अलावा गांवों में कृषि मंडियां, कुटीर उद्योग लगाने, बिजलीकरण करने में भी ग्रामीण सड़कों की मुख्य भूमिका रही है। गांव गांव तक फैलाए जा रहे सड़कों के जाल से ग्रामीण जीवन के सामाजिक आर्थिक जीवन में भी काफी बदलाव आया है।

351, ध्रुव अपार्टमेंट
मदर डेयरी के पीछे
पटपड़ गंज दिल्ली-92

लेखकों के लिए

रचना और अन्य प्रकाशनार्थ सामग्री भेजने वालों से अनुरोध है कि रचना भेजते समय वे कृपया ध्यान रखें कि रचना संक्षिप्त एवं रोचक होनी चाहिए। इसमें उपलब्ध करायी गयी जानकारी अप्रकाशित और प्रामाणिक होनी चाहिए। रचना दो प्रतियों में डबल स्पेस में टाइप की हुई हो जो सात-आठ पृष्ठों से अधिक की नहीं होनी चाहिए। विषय प्रतिपादन में उपशीर्षकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

रचना के साथ ब्लैक एंड व्हाइट फोटो भी आमंत्रित हैं।

अतिक्रमण

✍ दुर्गेश

बालू रेत के विशाल टीलों के मध्य स्थित रतनपुर ग्राम विकराल गर्मी और लू के थपेड़ों से अत्यधिक प्रभावित था। एक दूसरे से दूर-दूर बने कच्चे पक्के मकान और बीच-बीच में बालू रेत के टीले। विरल रूप में खड़े खेजड़े के पेड़ ही ग्राम की वनस्पति और हरितिमा थी। पटवार घर सबसे ऊंचे टीले पर बना होने के कारण गांव में प्रमुख रूप से दिखाई देता था।

काम के बदले अनाज योजना के अन्तर्गत जब से इस पटवार घर का निर्माण हुआ है धूड़ाराम पटवारी पहले से भी अधिक चिंतित रहने लगा। उसे लगता कि इस पटवार घर के इतनी ऊंचाई पर बनने से जैसे रेगिस्तान का और भी विस्तार हो गया है। पटवार घर की इस ऊंचाई से अब दूर-दूर तक के सूखे खेत दिखाई देने लगे है और तेज हवा के झोकों के साथ टीलों पर थिरकती अचपली रेत धूड़ाराम के मन को लगातार झकझोरती रहती है।

कुछ वर्षों पूर्व राज्य सरकार द्वारा उसे आदर्श पटवारी को रूप में पुरस्कृत किया गया था। सामने वही प्रशंसा पत्र लगा था। धूड़ाराम जब भी इस प्रशंसा पत्र को देखता उसे लगता यह रेगिस्तान विस्तार का प्रमाणपत्र है। उससे एक पटवारी के कर्तव्य का भलीभांति निर्वाह नहीं हो रहा है। वह सोचता 'पटवारी का काम मात्र कृषि भूमि का लेखा रखना ही नहीं होता, कृषि विस्तार के लिए भी उसे प्रयास करते रहना चाहिए। लेकिन उसके क्षेत्र में तो कार्य विपरीत ही हो रहा है।'

वह उठते-बैठते ऐसी ही बातें सोचता रहता और फिर अनायास विगत पच्चीस वर्षों का ग्राम इतिहास उसकी स्मृतियों में उभरकर और भी चिंतित कर देता। अब से पच्चीस वर्ष पहले धूड़ाराम की प्रथम नियुक्ति रतनपुर में ही हुई थी और कुछ समय को छोड़कर उसका अधिकतर कार्यकाल इसी ग्राम में पूरा हुआ है। पटवार घर से निकलकर जब भी वह खेतों की ओर जाता, उसे लगता खेत छोटे होकर वहां बालू रेत का विस्तार हो रहा है। आस-पास की प्रकृति में कितना अन्तर आ गया है इन वर्षों में।

कभी वह पास जमाबही के रजिस्टर को देखता तो कभी सामने लगे प्रशंसा पत्र को। इस समय वह यही सोच रहा था कि उनके देखते-देखते इस मरू क्षेत्र में रेत का लगातार विस्तार और टीलों की संख्या में वृद्धि ही हुई है। सोचते-सोचते विगत के समस्त आंकड़े उसके ध्यान में आ गये, चाहे अनाज की उपज हो, हरियाली का अनुमान हो अथवा खेती से संबंधित अन्य कोई सूचना हो, आस-पास के गांवों की हरियाली में प्रतिवर्ष गिरावट ही आ रही है।

विचार करते-करते उसका ध्यान अब से पच्चीस वर्ष पहले के समय पर केंद्रित हो गया। उस समय गांव और खेतों के बीच सघन बीड़ था। बीड़ में विचरते जीव-जानवर और पंछी-पंखेरूओं से गांव का वातावरण बहुत ही सजीव रहता था और भींभरी की आवाज जैसे किसानों को और अधिक कार्य करने की प्रेरणा देती थी। इसी तरह जगह-जगह गोचर भूमि में चारे पशु और खेजड़ी पर उड़ती सोनल भींग से खेतों की छटा मन मोहक दिखाई देती थी। वर्षा के पानी से भी जोहड़-तालाब कृषकों को जीने-जूझने का नया उत्साह प्रदान करते थे। लेकिन अब बीड़ और गोचर भूमि के संरक्षण-विकास की चिंता कौन करता है ? अब तो लोग थोड़े से लाभ के लिए जोहड़ और कुण्ड पायतन पर भी हल चला देते हैं। किसान लोग तालाबों के ही नहीं सींवों के वृक्ष भी उखाड़ रहे हैं।

धूड़ाराम जब भी लोगों को प्रकृति -संरक्षण, वन-विस्तार और वृक्षारोपण के सुझाव देता तो हंसकर यही कहते "पटवारी जी, आप तो अपने काम का ही ध्यान रखो। खेती की बात आप क्या जानो।" इस समय पूर्व के अनेक प्रसंग उसके सामने आ रहे थे। इस प्रसंगों पर सोचते-सोचते आज तो वह अत्यधिक व्यथित हो गया। बहुत देर तक सोचने के बाद उसने पटवार घर में इधर-उधर पड़े समान को संभालकर एक ओर रखा और पटवार घर से निकल गया। भारी मन और थके कदमों से चलते हुए उसे लग रहा था जैसे पीछे से शुष्क मरुधरा उसका उपहास कर रही है। खेतों के विवरण का रजिस्टर मानो और भी वजनी हो गया है।

इस वर्ष समय पर वर्षा नहीं होने के कारण गांव में पानी-चारे की विकट समस्या उत्पन्न हो गई थी। इस समस्या के समाधान के लिए आज फिर पंचायत भवन में गांव वालों की बैठक जुड़ी थी। पंचायत भवन के छोटे से हाल में गांव के सभी प्रमुख लोग

सरपंच के चारों ओर बैठे थे। गांव-गुवाढ़ की अन्य समस्याओं के समाधान की तरह ही जैसे वे सूखे और अकाल की समस्या का हल भी ग्राम पंचायत से करवाना चाहते थे।

बैठक में किसी ने अकाल-सहायता के कार्य आरंभ करवाने का सुझाव दिया, तो किसी ने पानी के स्थाई समाधान के लिए आंदोलन-प्रदर्शन को आवश्यक बताया। इसी प्रकार नि:शुल्क सहायता, सस्ते अनाज और अन्य सुविधाओं पर विचार-विमर्श होता रहा।

तभी हाथ में झोला लिए धूड़ाराम पटवारी हाल में उपस्थित हुए। जिन्हें देखते ही सरपंच बोले, ''आओ, आओ, पटवारी जी, ये गांव वाले आपको ही पूछ रहे हैं। अब इनको आप ही बताओ प्रशासन द्वारा अकाल सहायता के लिए गांव में क्या-क्या कार्य करवाये जायेंगे ? आपने गांव के अभावग्रस्त होने की रपट तो आपने भेज दी होगी?'' अब सभी का ध्यान पटवारी की ओर केंद्रित हो गया। धूड़ाराम बोले,'' अब सहायता कार्यों की सूचना तो आप लोगों को दूसरा पटवारी ही देगा।''

''दूसरा क्यों ? क्या आपका यहां से ट्रांसफर हो गया है। सभी आश्चर्य से एक साथ बोले।

धूड़ाराम ने कहा,''नहीं, मेरा ट्रान्सफर तो नहीं हुआ है। पर अब मैं राजकीय सेवा से त्यागपत्र देने तहसील मुख्यालय जा रहा हूं।''

''त्यागपत्र ! पटवारी जी, यह आप क्या कर रहे हैं ? क्या यह सच है ? पर आपने त्यागपत्र का निर्णय क्यों लिया ?'' सरपंच ने आश्चर्य चकित होकर पूछा।

''हां, हां मैं इस सेवा से त्यागपत्र दे रहा हूं। पटवारी का काम गांवों में होने वाले अतिक्रमण की रिपोर्ट कर अतिक्रमण को रुकवाना भी है। पर मैं अपने इस कार्य में सफल नहीं हो सका। मेरे क्षेत्र के किसानों ने भूमि पर ही नहीं प्रकृति पर भी अतिक्रमण किया है। मैं यहां के लोगों को लगातार समझाता रहा कि वृक्षों का संरक्षण करो, पेड़ लगाओ और हरियाली का विकास करो। पर यहां के किसान पेड़-प्रकृति से खिलवाड़ करते रहे। बीड़-गोचर भूमि की वन सम्पदा को उजाड़ते रहे और जोहड़-तालाबों पर अतिक्रमण करने में भी कोई संकोच नहीं किया और देखते-देखते वन-खेतों का एक बड़ा क्षेत्र रेगिस्तान में बदल गया। ऐसे में अकाल नहीं पड़ेगा तो क्या होगा ? बादल तो वृक्षों पर ही बरसेंगे। जब कहीं हरियाली ही नहीं है तो कैसे बादल, कैसी घटाएं और कितनी वर्षा ? अब अकाल सहायता की चर्चा करते रहो।''

कहते-कहते धूड़ाराम झोला लेकर पंचायत भवन से बाहर निकल गये। तब सरपंच बोला, ''गांव वालो, पटवारी जी को रोको। पटवारी तुम्हारा सच्चा हितैषी है। यह व्यक्ति सूखे के संकट से दूर रहने के उपाय बता सकता है। ''

सभा में बैठे कई लोग पटवारी की ओर दौड़ते हुए बोले, ''पटवारी जी, रुकिए, रुकिए। अब हम अपनी भूल सुधारेंगे, आपका कहना मानेंगे और वृक्ष लगाकर दिन-रात प्रकृति का विकास करेंगे। इस समय आप त्यागपत्र का विचार छोड़कर इसी गांव में पटवारी रहो।'' पर पटवारी रुके नहीं। उन्होंने और भी तेज गति से दौड़ना शुरू कर दिया लेकिन गांव वाले भी पटवारी जी के पीछे दुगुने वेग से भागे और उन्होंने उन्हें रोककर ही दम लिया क्योंकि गांव वाले अब तक जान चुके थे कि पटवारी धूड़ाराम ही उनके सच्चे मित्र व हितैषी हैं। पटवारी जी वास्तव में उनका भला चाहते हैं।

महाराजा होटल, चूरु, (राजस्थान)

पाठकों के विचार

इस पत्रिका में 'पाठकों के विचार' नाम से एक नया स्तम्भ प्रारम्भ कर रहें हैं। इस स्तम्भ में पाठकगण ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं पर अथवा इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों पर अपने विचार भेज सकते हैं। ये विचार ढाई सौ शब्दों से अधिक में न हों और सम्पादक कुरुक्षेत्र, कमरा न० 467, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजे जाएं।

इसके लिए कोई पारिश्रमिक देय नहीं होगा परन्तु उन पाठकों को पत्रिका की एक प्रति भेजी जाएगी जिनके विचार इस स्तम्भ में प्रकाशित होंगे।

-सम्पादक

उत्तर प्रदेश में सड़कें

✍ सुरेश सिंह

किसी प्रदेश या स्थान के विकास की कहानी में उसकी सड़कों का विशेष योगदान होता है। उत्तर प्रदेश में जनसंख्या, क्षेत्रफल और भौगोलिक विविधता के दृष्टिकोण से यहां की सड़कों की स्थिति जन जीवन की गतिविधियों का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करती हैं।

आंकड़ों के अनुसार पूरे देश में 18 लाख 43 हजार 420 किलोमीटर पक्की और कच्ची सड़कें हैं। उत्तर प्रदेश में कुल एक लाख 83 हजार 957 किलोमीटर लम्बी सड़कों का जाल है। इसमें जहां पक्की सड़कों की कुल लम्बाई 84 हजार 147 किलोमीटर, है, कच्ची सड़कें 99 हजार 810 किलोमीटर हैं।

राष्ट्रीय राजमार्ग

यद्यपि राष्ट्रीय राजमार्गों का देश के समस्त सड़क मानचित्र पर कुल हिस्सा दो प्रतिशत ही है फिर भी इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि उनके हिस्से में देश के कुल यातायात का 40 प्रतिशत आता है। राष्ट्रीय राजमार्गों की जिम्मेदारी केन्द्रीय सरकार की होती है।

उत्तर प्रदेश में राष्ट्रीय राजमार्गों का एक जाल बिछा हुआ है। इस समय देश के कुल 76 राष्ट्रीय राजमार्गों में से 11 उत्तर प्रदेश में हैं या इस प्रदेश की सीमा से होकर गुजरते हैं। पड़ोसी प्रदेशों तथा देश के दूसरे भागों से ये सड़कें प्रदेश को मिलाती हैं। दिल्ली से कलकत्ता तक जाने वाला राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या दो का 770 किलोमीटर हिस्सा उत्तर प्रदेश में पड़ता है। यह दिल्ली, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल के बीच से जाने वाला 1490 किलोमीटर लम्बा एक महत्वपूर्ण राजमार्ग है।

आगरा से बम्बई को जोड़ने वाला नेशनल हाइवे जहां 1160 किलोमीटर लम्बा है, इसका केवल 26 किलोमीटर भाग ही उत्तर प्रदेश में आता है। शेष राजस्थान, मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र की सीमाओं में अवस्थित है।

वाराणसी से कन्याकुमारी को जोड़ने वाला नेशनल हाइवे सं. 7 कुल मिलाकर 2369 किलोमीटर लम्बा है। इसका 128 किलोमीटर भाग ही प्रदेश के हिस्से में आता है। शेष दूरी मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु के क्षेत्र में पड़ती है। दक्षिण के अधिकांश राज्यों को उत्तर प्रदेश से मिलाने वाली यह प्रमुख सड़क है।

इसी प्रकार आगरा-जयपुर बीकानेर नेशनल हाइवे राजस्थान से इस प्रदेश का सड़क सम्पर्क स्थापित करता है, इसका केवल 51 किलोमीटर उत्तर प्रदेश में आता है। यह सड़क कुल 582 किलोमीटर है।

राष्ट्रीय राजमार्गों में दो, केवल प्रदेश के भीतर के ही जिलों के बीच सम्पर्क स्थापित करते हैं। गोरखपुर-गाजीपुर-वाराणसी नेशनल हाईवे केवल 196 किलोमीटर लम्बा है और यह घनी आबादी वाले कई जिलों का एक विशिष्ट सम्पर्क सूत्र है। इसी प्रकार 285 किलोमीटर लम्बा लखनऊ-वाराणसी मार्ग रास्ते के बाराबंकी, रायबरेली, सुलतानपुर और जोनपुर जिलों से गुजरता है।

दिल्ली-बरेली-लखनऊ राजमार्ग की कुल 438 किलोमीटर लम्बाई में से केवल 8 किलोमीटर संघ शासित दिल्ली प्रदेश में पड़ती है। इसका बाकी हिस्सा उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों के लिए एक महत्वपूर्ण सम्पर्क बनाने के साथ ही प्रदेश की राजधानी को राष्ट्रीय राजधानी से मिला देता है।

लखनऊ से शिवपुरी (बरास्ता कानपुर-झांसी) वाला नेशनल हाइवे संख्या 25 अपनी कुल 237 किलोमीटर दूरी इस प्रदेश की ही सीमा में तय करता है। 396 किलोमीटर का झांसी-लखनऊ राजमार्ग जहां उत्तर प्रदेश की सीमा से सिर्फ 128 किलोमीटर है, वहीं यह मध्यप्रदेश के 268 किलोमीटर क्षेत्र की बढ़िया सड़क मानी जाती है।

इलाहाबाद से मध्यप्रदेश के मंगावां नामक स्थान को राष्ट्रीय राजमार्ग सं. 27 जोड़ता है। इस सड़क की कुल लम्बाई 93 किलोमीटर है।

राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 28 नेशनल हाईवे संख्या 31 में जाकर मिल जाता है। लखनऊ से गोरखपुर होते हुए यह बिहार के बरौनी तथा मुजफ्फरपुर आदि स्थानों को जाने वाली सड़क है। उत्तर प्रदेश में यह 322 किलोमीटर और बिहार के 259 किलोमीटर क्षेत्र से गुजरती है।

राज्य क्षेत्र की सड़कें

उत्तर प्रदेश में सार्वजनिक निर्माण विभाग, राज्य क्षेत्र में निर्मित की जाने वाली सड़कों का सबसे प्रमुख विभाग है जो इसके निर्माण के साथ ही रख-रखाव की व्यवस्था भी सुनिश्चित करता है। इसके अलावा जिला परिषदों और नगर महापालिकाओं को भी यह उत्तरदायित्व कुछ हद तक सौंपा गया है। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (एस.एन.पी.) के अंतर्गत ये ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों का विकास कार्य भी चला रहा है।

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम

सड़क निर्माण के वास्ते 1990 तक का जो राष्ट्रीय लक्ष्य रखा गया था उसके अंतर्गत डेढ़ हजार या उससे अधिक आबादी वाले सभी गांवों को सड़क सुविधा मुहैया करानी थी। 1000 से1500 की जनसंख्या वाले गांवों का 50 प्रतिशत कवर किए जाने का लक्ष्य रखा गया। उसके तहत उत्तर प्रदेश की नई सड़कों का जाल का घनत्व काफी बढ़ा है। इसमें जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत प्रदेश में सड़क निर्माण के कार्य में प्रगति आई। इससे 1000 से 1500 की आबादी वाले 43 प्रतिशत और 1500 से अधिक वाले 65 प्रतिशत गांवों को हर मौसम में चालू रहने वाली सड़कों से जोड़ा जा सका है।

ग्रामीण सड़कों का विकास न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अंतर्गत राज्य क्षेत्र में आता है। राज्यों के योजना बजट में इसके खर्च का प्रावधान किया जाता है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में संशोधित लक्ष्य के अनुसार पहाड़ी क्षेत्रों के 500 से अधिक जनसंख्या वाले गांवों को 10 वर्ष की अवधि में सड़क से शत प्रतिशत जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है। 200 से 500 तक की आबादी वाले 50 प्रतिशत गांवों को इसी अवधि के भीतर सड़क देने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। जन जातियों वाले क्षेत्रों में शत प्रतिशत गांवों को सड़क के वास्ते 1000 से अधिक आबादी वाला होना आवश्यक है, जबकि 500 से 1000 तक आबादी वाले 50 प्रतिशत गांवों को न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत सड़क से जोड़ने का लक्ष्य है।

पर्यटन

पर्यटन उद्योग को बढ़ावा देने की दिशा में सड़कों का विशेष महत्व है। आगरा, इलाहाबाद, हरिद्वार, लखनऊ और वाराणसी से प्रदेश और देश के महत्वपूर्ण पर्यटन स्थलों तक जाने के लिए सीधे सड़क मार्ग की व्यवस्था है। उन पर निरीक्षण गृहों की भी सुविधा उपलब्ध कराई गई है। दूरी की दृष्टि से आगरा से इलाहाबाद 483 कि.मी., अयोध्या 500 कि.मी., दिल्ली 200 कि.मी., लखनऊ 369 कि.मी. और वाराणसी 605 कि.मी. पर स्थित है।

इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश के उच्च न्यायालय, विश्वविद्यालय तथा गंगा यमुना के संगम होने के नाते अधिक महत्वपूर्ण है। प्रदेश के कोने कोने से यह सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। अयोध्या से इसकी दूरी 166 कि.मी., हरिद्वार से 748 कि.मी., कानपुर से 193, लखनऊ से 272, मथुरा से 537, मसूरी से 817, ऋषिकेश से 772 और वाराणसी से 122 कि.मी. है।

हरिद्वार से बद्रीनाथ 288 कि.मी., केदारनाथ 241 और ऋषिकेश 24 किलोमीटर की दूरी है। सड़कें यातायात की प्रमुख साधन हैं।

इसी प्रकार प्रदेश की राजधानी लखनऊ से दिल्ली 499 किलोमीटर, हरिद्वार 593, जयपुर 599, मसूरी 662, नैनीताल 379, ऋषिकेश 617 और वाराणसी 286 किलोमीटर लम्बे सड़क मार्ग से जुड़े हैं।

वाराणसी से दिल्ली 805 कि.मी., हरिद्वार 870, मसूरी 939 और नैनीताल 699 किलोमीटर की दूरी पर हैं।

डकैती बहुल क्षेत्रों में सड़कें

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान के डकैती बहुल क्षेत्रों में सड़कों के वास्ते 1985-86 से एक केन्द्र प्रयोजित योजना हाथ में ली गई। सड़कों के विकास द्वारा डकैती की समस्या से ग्रस्त इस क्षेत्र का आर्थिक विकास ही इस योजना का मूल लक्ष्य है। इसका आधा खर्च केन्द्र उठाता है और आधा संबंधित राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है। इसके लिए उपलब्ध केन्द्रीय राशि में से उत्तर प्रदेश को हर साल 48 प्रतिशत और मध्यप्रदेश व राजस्थान को 26-26 प्रतिशत भाग उपलब्ध कराया जाता है। इसके अंतर्गत उत्तर प्रदेश को अब तक केन्द्र से एक अरब 20 करोड़ रुपये मिल चुके हैं।

अन्य विभागीय सड़कें

सिंचाई और वन आदि विभागों की अपने कामकाज के लिए अलग से सड़कें हैं। नहरों के जाल के समानान्तर सड़कों की व्यवस्था का उत्तर प्रदेश के गांवों में विशेष महत्व है। उनकी अर्थव्यवस्था बहुत कुछ इन पर आधारित होती है।

गांवों की सड़कें

उत्तर प्रदेश के गांवों की सड़कें अधिकतर कच्ची हैं और उन्हें

कई श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। खेती की भूमि के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वाले वर्षों में कई बार चकबन्दियां की गईं और सुधार की कोशिशें हुई और चकों के बीच से सड़कों का प्रावधान किया गया। लेकिन गांवों में अशिक्षा, स्वार्थपरता और भूमि हथियाने की बुरी प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप ये चकरोड प्रायः खस्ताहाल हैं। उनकी चौड़ाई घट गई है। उनका दुरूपयोग भी किया जा रहा है जिससे वे यातायात के काबिल नहीं रह पाए। गांवों से लिंक रोडों का निर्माण और उनकी मरम्मत भी संतोषजनक रूप से नहीं हो पाती। राष्ट्रीय सेवा योजना, एन.सी.सी. तथा अन्य ऐसे ही संगठन श्रमदान द्वारा इस कमी को पाटने का जहां-तहां प्रयास करते हैं लेकिन आवश्यकता को देखते हुए इसे नगण्य ही कहा जायेगा। सामुदायिक विकास खंडों के द्वारा ग्रामीण अंचलों में परिचालित जवाहर रोजगार योजना में भी गांवों में आबादी के भीतर खड़ंजा लगाने, संपर्क सड़कों के निर्माण में कुछ प्रगति अवश्य दिखाई देती है, लेकिन इसे भी ऊंट के मुंह में जीरा से अधिक नहीं माना जा सकता।

सीमावर्ती तथा पर्वतीय अंचलों की सड़कें

उत्तर प्रदेश का एक बड़ा हिस्सा पर्वतीय ही नहीं, बल्कि वह अंतर्राष्ट्रीय सीमा से भी जुड़ा हुआ है। भारत सरकार का सीमा सड़क संगठन देश के सीमावर्ती क्षेत्रों में सड़क निर्माण के अलावा उनके रख रखाव का दायित्व सम्भालता है। पहाड़ी क्षेत्रों की खनिज सम्पदा, वन-संसाधनों और पन-बिजली परियोजनाओं तथा आम आदमी की रोजमर्रा जरूरतों के लिहाज से वनांचलों और पहाड़ों की सड़कों के निर्माण के साथ ही पहले से मौजूद मार्गों को चौड़ा करने और उन्हें मजबूत बनाने का काम भी चलाया जा रहा है। पहाड़ों की सड़कों का निर्माण और रख-रखाव दोनों ही कठिन होने के साथ ही, खर्चीले भी हैं। किसी भी दृष्टि से उनकी तुलना मैदानी क्षेत्र की सड़कों से करना उचित नहीं होगा। मानसून के दिनों में मूसलाधार बरसात, सर्दियों की बर्फ, तापमान में व्यापक तबदीली और भूस्खलन आदि के कारण पहाड़ी क्षेत्रों में प्राकृतिक ढलानों का स्वरूप आये दिन बदलता रहता है। पिछले कुछ वर्षों से लोगों में सड़क प्रणाली के विकास के परिणामों को लेकर पर्यावरणीय चेतना आई है। इस निर्माण में इसीलिए तमाम सावधानियों को बरतने की आवश्यकता है।

नये पुल

सड़कों के साथ-साथ पुलों के निर्माण का भी उतना ही महत्व है। उत्तर प्रदेश में तीन प्रमुख नदियों गंगा, यमुना और रामगंगा पर पुलों के निर्माण से यातायात में प्रगति आई है। मेरठ में गंगा नदी पर दिल्ली से लखनऊ वाली सड़क पर गढ़मुक्तेश्वर का पुल 1961 में बनकर तैयार हुआ। इसमें 115 लाख रुपये से अधिक धन राशि खर्च हुई। फर्रूखाबाद में बरेली-इटावा-शाहजहांपुर रोड पर 1969 में तैयार किया गया पुल अनुमानतः 193.3 लाख रुपये के खर्च पर बनाया गया। 1976 में कानपुर का गंगा का पुल बनकर तैयार हुआ। इस विशाल पुल को 24 महीनों के रिकार्ड समय में 175 लाख रुपये के खर्च से बनाया जा सका। इसी साल मिरजापुर में जोनपुर रोड पर गंगा पुल बनाया गया। हरिद्वार में 1977 में गंगा नदी पर पुल बना। इस पर 4 करोड़ 10 लाख रुपये खर्च हुए। अगला पुल रायबरेली के जिगासन नामक स्थान पर बना। इसी प्रकार इलाहाबाद, गाजीपुर और कन्नौज में गंगा नदी पर पुल बनाये गये। इन निर्माणों से सड़क विकास के काम को नया आयाम मिला।

उत्तर प्रदेश की समस्या विकास की है, जिसमें उसकी सड़कों और यातायात सुविधाओं का विशेष महत्व है। लेकिन उनके निर्माण और मरम्मत के काम में कुछ स्वार्थी तत्वों द्वारा धन का जो अपव्यय होता है, उसे रोकने की जरूरत है। सड़कें इस विशाल प्रदेश की धमनियों की तरह हैं, जिनका स्वस्थ विकास और रख-रखाव हम सब का कर्तव्य हो जाता है।

4/7, ब्लाक 2,
न्यू मिन्टो रोड अपार्टमेंटस्
नई दिल्ली-110002

सामाजिक परिवेश में नारी की भूमिका

✍ डॉ0 आनन्द तिवारी

राष्ट्रीय तथा सामाजिक परिवेश में नारी की महत्ता को स्पष्ट करने के लिए किसी पश्चिमी नारी ने कहा था कि "यदि किसी देश को विनाश के कगार पर पहुंचाना है तो किसी परमाणु बम के विस्फोट की आवश्यकता नहीं है केवल उस देश से नारी जाति को हटा देने मात्र से देश का विनाश निश्चित है।" उक्त शब्द नारी शक्ति की किसी राष्ट्र के विकास हेतु आवश्यकता को निरूपित करते हैं।

भारतीय समाज में प्राचीनकाल से ही नारी का विशेष स्थान रहा है। भारतीय नारी के आदर्श त्याग, सहिष्णुता, धैर्य, उदारता, सहनशीलता और सेवा भावना आदि रहे हैं। इसीलिए भारत में नारी को शक्ति, ज्ञान एवं लक्ष्मी का प्रतीक माना गया है। धर्मग्रंथों, उपनिषदों एवं स्मृतिग्रंथों में नारी के अभाव में पुरुष को अपूर्ण माना गया है और नारी को पुरुष की अर्द्धांगिनी कहा गया है। हमारे समाज में नारी कन्या (पुत्री), भार्या (पत्नी) एवं जननी (माता) के रूप में सदैव ही सम्मानित एवं पूजनीय रही है। कन्या के रूप में नारी उस परिवार के प्रति महती सेवायें समर्पित करती है जिस परिवार में उसने जन्म लिया है। दूसरी ओर भार्या के रूप में विवाहोपरांत, त्याग, बलिदान, एवं अमूल्य सेवायें अर्पित करती है। दो परिवारों में सामंजस्य का निर्वहन करते हुए अपनी चारित्रिक विशेषता एवं आचरण से उनकी ख्याति बढ़ाती है तथा स्वयं को आत्मसात कर लेती है। जननी के रूप में बच्चों को जन्म देती है उन्हें सुसंस्कार व जीवनोपयोगी शिक्षा-दीक्षा प्रदान करती है। ताकि उनमें सांस्कृतिक, नैतिक, सामाजिक मूल्यों व व्यक्तित्व का समुचित विकास हो सके और ये बच्चे राष्ट्र के प्रति समर्पित नागरिक बन सके। इसलिए कहा गया है कि "दस शिक्षकों में श्रेष्ठ आचार्य है सौ आचार्यों से श्रेष्ठ पिता है और हजार पिताओं से श्रेष्ठ वंदनीय व आदरणीया माता है"

जिस प्रकार मानव शरीर में प्राण (हृदय) का महत्व होता है। उसी प्रकार परिवार में नारी का महत्व होता है। मानव शरीर से प्राण निकाल देने से शरीर मात्र हाड़ मांस का निर्जीव पुतला हो जाएगा। इसी प्रकार यदि परिवार से नारी को पृथक कर दिया जाए तो परिवार रूपी संस्था का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। नारी के जीवन के बुनियादी उद्देश्य हैं - समूचे जगत को सुन्दर व सुखद बनाना, संताप मिटाना और आनन्द बढ़ाना। जिस प्रकार फूल अपनी मनमोहक मुस्कान व सुगन्ध से अपने आस पास के परिवेश को सुगंधित एवं सौन्दर्यपूर्ण बनाता है उसी प्रकार नारी भी अपने आस पास के परिवेश को सुरभित व सुन्दर बनाती है।

परिवार में नारी जिस प्रेम स्नेह एवं वात्सल्य से अपनी सेवायें समर्पित भावना से अर्पित करती है वे सेवायें अर्थव्यवस्था की दृष्टि से भले ही अनुत्पादक हों किन्तु समाजिक एवं राष्ट्रीय दृष्टि से अमूल्य एवं दुर्लभ हैं। इन सेवाओं को न तो पुरुष वर्ग द्वारा अर्पित करना संभव है और न ही इन सेवाओं को मूल्य देकर खरीदा जा सकता है क्योंकि मूल्य (पारिश्रमिक) देकर सेवायें तो खरीदी जा सकती हैं किन्तु वह त्याग, सहिष्णुता, वात्सल्य एवं नैसर्गिक प्रेम व स्नेह तो अमूल्य हैं वह तो नारी की आंतरिक मनोभावों से संबंधित है।

नारी की अन्य विशेषता यह है कि नारी में मातृत्व गुण नैसर्गिक एवं सहज होता है। पुरुष वर्ग में पितृत्व गुण विद्यमान होता है किन्तु नारी व पुरुष में मातृत्व व पितृत्व में बुनियादी फर्क होता है। जहां नारी में मातृत्व गुण नैसर्गिक अधिक होता है वहीं पुरुष में पितृत्व गुण नैसर्गिक कम, सामाजिक दृष्टि से अधिक होता है, पुरुष अपने इस सामाजिक उत्तरदायित्व से मुक्त हो सकता है, किन्तु नारी अपने मातृत्व उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं हो सकती है। नारी न केवल मातृत्व जिम्मेदारी का निर्वहन कर सकती है अपितु पितृत्व जिम्मेदारी का निर्वहन एक सीमा तक कर सकती है। इसीलिए शिक्षा की दृष्टि से शिक्षा किसी भी समाज तथा राष्ट्र के लिए अपरिहार्य है। नारी को शिक्षित करना एक परिवार को शिक्षित करना है और नारी को शिक्षा भी ऐसी दी जाए जिससे वह सांस्कृतिक सामाजिक व नैतिक मूल्यों के संस्कारों का बीजारोपण बच्चों में कर सके और उन्हें राष्ट्र का अच्छा नागरिक तथा इन्सान बना सके।

नारी का परिवार, समाज व राष्ट्र पर अमूल्य ऋण है इसीलिए हमारा समाज सदैव नारियों के प्रति ऋणी रहेगा।

सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य
268 इन्दिरा कालोनी, सागर (म0प्र0)

बिहार के सामाजिक-आर्थिक विकास की द्योतक: ग्रामीण सड़कें

✍ किरण गुप्ता

आज बिहार देश के आर्थिक रूप से सबसे पिछड़े राज्यों में से एक है। इसका मुख्य कारण राज्य में और विशेष रूप से इसके ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों के ताने-बाने की कमी है। यही कारण है कि विकास कार्य करने में लागत अधिक आती है, समय अधिक लगता है और विकास के लाभ आम आदमी तक देर से पहुंच पाते है, और जिनका परिणाम यह होता है कि लोगों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

बिहार भारत के उत्तर-पूर्व में स्थित है। इसके पूर्व और दक्षिण में पश्चिम बंगाल और उड़ीसा, पश्चिम में उत्तर प्रदेश, और मध्यप्रदेश तथा उत्तर में नेपाल का सीमा क्षेत्र है। यहां बौद्ध मठ, हिन्दुओं के तीर्थस्थान, सिक्खों के गुरुद्वारे, शिक्षा-संस्कृति के प्राचीन अवशेष, ऐतिहासिक महत्व की इमारतें और पर्यटन केन्द्र हैं।

बिहार में मौसम सदैव अजीबो-गरीब रहता है, कड़ाके की सर्दी के बाद यहां भीषण गर्मी पड़ती है, यहां का तापमान 40 डिग्री सेल्सियस रहना एक आम बात है। गर्मी के बाद यहां के कुछ क्षेत्रों में भारी वर्षा होती है जिससे फसलों को बहुत नुकसान होता है। यह एक ऐसा राज्य है, जहां एक तरफ तो इतनी वर्षा होती है कि सारा क्षेत्र बाढ़ग्रस्त हो जाता है, चारों ओर त्राहि-त्राहि मच जाती है और सभी संचार सेवाएं अस्त-व्यस्त हो जाती हैं। दूसरी ओर इतना भीषण सूखा पड़ता है कि लोग पानी की एक-एक बूंद के लिए तरस जाते हैं।

इस राज्य में 67,566 गांव हैं जिनमें से केवल 25,392 गांव कच्ची-पक्की सड़कों से जुड़े हुए हैं। यहां की 50 प्रतिशत जनसंख्या को सड़क संचार सेवा उपलब्ध नहीं है। वास्तव में यही कारण है कि यह राज्य शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग, सेवा आदि जन-जागरूकता के क्षेत्र में सबसे अधिक प्रभावित हुआ है। गांवों की बुनियादी जरूरत बारहमासी सड़कें हैं लेकिन इनके निर्माण में सबसे बड़ी कठिनाई निवेश की कमी है।

खनिज सम्पदा में बिहार, देश के धनी राज्यों में से एक है। राज्य के कुछेक खनिज क्षेत्रों में बड़े उद्योग विकसित भी हुए हैं लेकिन दु:ख की बात यह रही है कि इस विकास से द्वितीय और तृतीय क्षेत्र में कोई विशेष प्रगति नहीं हो सकी है। राज्य में चीनी, कागज, सीमेंट, लोहा, इस्पात तथा पैट्रोलियम जैसे विभिन्न 11 बड़े उद्योग कारखाने हैं। इसके अलावा 150 मध्यम दर्जे के कारखाने भी हैं। परन्तु सड़कों, सिंचाई और बिजली की सुविधाएं पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होने के कारण राज्य औद्योगिक विकास की गति नहीं पकड़ सका है।

कृषि और इससे संबद्ध कार्यों में जहां 1971 में 83 प्रतिशत श्रमिक लगे हुए थे वे 1981 में घटकर 79 प्रतिशत रह गए हैं जबकि औद्योगिक क्षेत्र में इनकी संख्या 16 प्रतिशत से बढ़कर 20 प्रतिशत हो गई है। इसी अवधि में लोगों के खाने-पीने का खर्च 77.4 प्रतिशत से 72 प्रतिशत रह गया है और दूसरी चीजों पर होने वाला खर्च 22 प्रतिशत से बढ़कर 27.2 प्रतिशत हो गया है। जो राज्य के रहन-सहन के स्तर में सुधार को दर्शाता है। किंतु यह गति अन्य राज्यों की तुलना में काफी धीमी है। इसका कारण भी विकास ढांचे, विशेष रूप से सड़क और संचार सुविधाओं का पर्याप्त मात्रा में न होना है।

राज्य में 50 जिला मुख्यालय, 90 उपमण्डल मुख्यालय तथा 590 ब्लाक मुख्यालय हैं। कुछ जिलों उपमण्डलों और बहुत से ब्लाकों में बारहमासी सड़कें नहीं हैं।

पूरे राज्य का एक विस्तृत अध्ययन किया गया है और सड़कों के निर्माण के लिए एक परियोजना तैयार की गई है। 1971 की जनगणना के अनुसार राज्य में 1500 से अधिक आबादी वाले 8228 गांव, 1000-1500 तक की आबादी वाले 6104 गांव और 1000 तक की आबादी वाले 53,234 गांव हैं। 1500 से अधिक आबादी वाले 5013 गांवों में तारकोल की सड़कें और 1449 गांवों में कंकरीट की पक्की सड़कें हैं। 1315 ऐसे गांव हैं जहां अभी सड़कें नहीं हैं। इसके अलावा, 1800 से भी अधिक ग्रामीण मण्डियों में पहुंचने के लिए बारहमासी सड़कें नहीं हैं। राज्य सड़क निर्माण परियोजना में 1216 गांवों को सड़क बनाने के लिए शामिल किया गया है।

राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों का सामाजिक-आर्थिक विकास काफी हद तक सड़कों के विकास पर निर्भर करता है क्योंकि यही एक मात्र साधन है जो गांवों को राष्ट्रीय विकास धारा से जोड़ता है। सड़क निर्माण और सामाजिक आर्थिक विकास, दोनों

में गहरा सम्बन्ध है। इससे ग्रामीण विकास तीन प्रकार से प्रभावित होता है :

1. सड़कों के माध्यम से अधिकाधिक बुनियादी सुविधाएं आसानी से मिल पाती हैं जिसके परिणमस्वरूप एक सामाजिक परिवर्तन होता है और अन्तत: गरीबी, बेरोजगारी, व निरक्षरता समाप्त होती है।
2. सड़कों के माध्यम से कृषि भूमि के प्रयोग, फसलों के उत्पादन, उनके मण्डियों तक पहुंचने, किसानों की खपत, आय-ढांचे और परिवहन के साधनों में परिवर्तन आता है। यही परिवर्तन गांवों के समग्र विकास का सूचक होता है।
3. आने-जाने का माध्यम उपलब्ध होने से कृषि के अलावा अन्य प्रकार के मजदूरी रोजगार में वृद्धि होती है, समय की बचत होती है, अधिक लोग रोजगार योजनाओं का लाभ उठा सकते हैं और अपने आप को गरीबी के चंगुल से मुक्त करा सकते हैं।

भारत मे तीन स्तरीय सड़क प्रणाली अपनाई गई है - अर्थात राष्ट्रीय राज-मार्ग, जिला-मार्ग तथा ग्रामीण सड़कें। बिहार सहित देश के विभिन्न भागों में पहले दो प्रकार की सड़कों पर तो ध्यान दिया गया है लेकिन ग्रामीण सड़कों की ओर विशेष ध्यान न देकर उन्हें अकेला छोड़ दिया गया है। यहां इस बात की अनदेखी नहीं की जा सकती। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना, त्वरित ग्रामीण जल सप्लाई कार्यक्रम, इन्दिरा आवास योजना, भूमि सुधार, ग्रामीण युवा स्वरोजगार प्रशिक्षण योजना, ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम, राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन जैसे केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित कार्यक्रम तथा न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम जैसे राज्य सरकार के कार्यक्रम के लक्ष्यों को प्राप्त करने और गांवों को राष्ट्रीय मुख्यधारा से जोड़ने के लिए ग्रामीण सड़कें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

यदि हम विगत पर दृष्टि डालें तो पता चलता है कि गांवों को सड़कों से जोड़ने के विषय पर राष्ट्रीय स्तर की एक नीति तैयार की गई थी और 20-20 वर्ष के तीन लक्ष्य निर्धारित किए गये थे। पहला लक्ष्य 1943 से 1961 तक की अवधि के लिए था जिसमें अखिल भारतीय स्तर पर 5,29,685 कि0मी0 और बिहार में 58,547 कि0मी0 सड़कें बनाई जानी थीं। जबकि अखिल भारतीय स्तर पर 5,24,478 कि0मी0 सड़कें बनाई गई, बिहार में केवल 12,748 कि0मी0 सड़कें ही बनाई जा सकीं। इन आंकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि यदि बिहार अपने लक्ष्य के आधे को भी प्राप्त कर लेता तो राष्ट्रीय लक्ष्य को पार कर लिया जाता। दूसरा लक्ष्य 1961 से1981की अवधि के लिए था। इस अवधि में बिहार में 87,260 कि0मी0 सड़कें बनाने का लक्ष्य था और इस अवधि में 80,315 कि0मी0 लम्बी सड़कें बनाई गईं जो लक्ष्य का 92 प्रतिशत बैठती है। तीसरा लक्ष्य 1981 से 2001 तक के लिए है। इस अवधि में बिहार में 2,13,022 कि0मी0 सड़कें बनाई जानी हैं जिनमें से 1992 तक 87,956 कि0मी0 सड़कें बनाई जा चुकी हैं तथा बहुत सी सड़कों का काम प्रगति पर है। अभी 9 वर्ष की अवधि शेष है। इस अवधि में आशा की जा सकती है कि बिहार अपने लक्ष्य को पार कर आगे निकल जाएगा।

चौथी पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण सड़कों को अधिक महत्व दिया गया था। राज्य में ग्रामीण सड़कें जो उस समय तक केवल 312 कि0मी0 थी, इस योजना के अंत तक बढ़कर 3,950 कि0मी0 हो गई। इसी प्रकार, पांचवीं पंचवर्षीय योजना में भी लगभग 3,500 कि0मी0 लम्बी सड़कें बनाई गई और मार्च 1980 तक ग्रामीण सड़कों की लम्बाई 8,500 कि0मी0 तक पहुंच गई।

राष्ट्रीय परिवहन नीति समिति, 1978 में 1500 से अधिक आबादी वाले सभी गांवों, 1000 से 1500 की आबादी वाले गैर आदिवासी क्षेत्रों और 500 से 1500 तक की आबादी वाले आदिवासी गांवों में से 50 प्रतिशत गांवों को 1990 तक सड़कों से जोड़ने की सिफारिश की थी।

मार्च, 1992 तक के अंत तक 1500 से अधिक आबादी वाले 8,228 गांवों में से 6,300 गांवों को 1000 से 1500 तक की आबादी वाले 6,104 गांवों में से 4,000 गांवों और 1,000 तक की आबादी वाले 53,234 गांवों में से 17,000 गांवों को मुख्य सड़कों से जोड़ दिया गया था। मार्च, 1992 के अंत तक ग्रामीण सड़कों की कुल लम्बाई 15,642 कि0मी0 थी। अन्य राज्यों की तुलना में ग्रामीण सड़कों के बारे में यह राज्य अभी भी काफी पिछड़ा हुआ है।

हाल ही में बिहार के 1216 ऐसे गांवों, जिनकी आबादी, 1500 से अधिक है, को मुख्य सड़कों से जोड़ने की एक आठ-वर्षीय योजना तैयार की गई है, जिसके अंतर्गत लगभग 5000 कि0मी0 लम्बी सड़कें बनाई जाएंगी। इस योजना में सहायता हेतु विश्व बैंक सिद्धांत रूप में सहमत हो गया है। यह योजना बिहार के ग्रामीण इंजीनियरी संगठन के एक अलग यूनिट द्वारा कार्यान्वित की जाएगी।

योजना में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाएगा कि ऐसे सभी गांवों को मुख्य सड़कों के साथ जोड़ने के लिए 'पहुंच सड़कें'

बनाई जाएं, जो मुख्य मार्ग में 1.6 कि0मी0 से दूर तक स्थित हैं। यह मानदण्ड राज्य के न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम का भी एक भाग है। राज्य की परियोजना रिपोर्ट के आधार पर यदि इस योजना को कार्यान्वित कर लिया जाता है तो इस राज्य की ग्रामीण जनता को अपना जीवन स्तर ऊपर उठाने में काफी मदद मिलेगी।

चूंकि बिहार एक खनिज संपदा से संपन्न क्षेत्र है, अत: सड़कों के होने से खनिजों के लाने-ले जाने की लागत कम हो जाएगी और लोगों की आय बढ़ेगी। आने-जाने की सुविधा में सेवा, उपचार और प्रचार की सुविधाएं आसानी से दूर-दराज के गांवों तक पहुंच सकेंगी। शिक्षा के क्षेत्र में भी एक आमूल-चूल परिवर्तन हो सकेगा। दैनिक प्रशासन के खर्च में कमी आएगी। प्रशासन की सेवाएं अधिक लोगों तक सही और कारगर ढंग से पहुंच सकेंगी। पर्यटन स्थलों तक पहुंचना आसान हो जाने से पर्यटकों की संख्या में वृद्धि होगी जिससे वहां के स्थानीय लोगों को रोजगार मिलेगा, उन क्षेत्रों की परम्परागत शिल्प वस्तुओं का प्रचार-प्रसार होगा। लोक-संस्कृति को पुन: उजागर किया जा सकेगा और इन सबसे राज्य को अतिरिक्त राजस्व का लाभ होगा। सूखे और बाढ़ की स्थितियों में राहत और बचाव कार्यों में आसानी होगी। ऐसी विपदाओं के कारण होने वाली जान-माल की हानि को रोका जा सकेगा।

नि:संदेह यह कहना अनुचित न होगा कि आज के आधुनिक युग में सड़कें संचार का ऐसा माध्यम हैं, जो ग्रामीण जन-जीवन को सीधा प्रभावित करती हैं। यदि उन लोगों के लिए सड़क सुविधा की व्यवस्था हो जाती है तो उन्हें गरीबी के चंगुल से उबारना आसान हो जाएगा।

4/1611, भोलानाथ नगर
दिल्ली-110 032

सफलता की कहानी

जमीला की कहानी

सुमन शर्मा

हमारे समाचार पत्र और पत्रिकाएं ग्रामीण विकास अथवा गांवों के जरूरतमन्द और गरीब लोगों की सहायता किस प्रकार कर सकते हैं इसका उदाहरण है जमीला और उसके पति मो0 हारेज अली का मुर्गीखाना और इसी के जरिए उनकी माली हालत में सुधार आना।

असम के उत्तरी लखीमपुर जिले का एक गांव है तिनीठिंगिया। उसी में रहता है जमीला का परिवार। 36वर्षीय जमीला और 42वर्षीय हारेज़ अली ने 'द जोरहाट ऐग्रीकलचर' और 'सात दिन' नामक पत्रिका और समाचार पत्रों में छपे लेखों से ही मुर्गीखाना शुरू करने की प्रेरणा पाई। उन्होंने बड़े तरीके से अपनी योजना बनाई। पहले लेखों में चर्चित मुर्गीखाने देखने गए और इस बारे में सभी जानकारियां हासिल कीं। उन्होंने गुवाहाटी के नूनमाटी स्थित मुर्गीखाने को भी देखा। फिर अपने गांव में घर से कुछ दूरी पर जमीन खरीदी और मुर्गी के चूज़ों को रखने के लिए शेड का निर्माण किया। शेड को चार भागों में बांटा हुआ है। जिसमें चार विभिन्न आयु वर्ग के चूज़े रखे हैं। जमीला यह चूज़े लखीमपुर से खरीदती है जिनकी कीमत उसे करीबन 1025 रुपये प्रति 100 चूज़े पड़ती है। यह छोटे चूज़े मुर्गीखाने में बड़े होते है। फिर बेच दिए जाते हैं। इनके खाने और दवाई इत्यादि पर खर्च के बाद भी जमीला करीबन 2000 रुपये प्रति माह की आय इस मुर्गीखाने से पा लेती है।

जमीला के घर के आस पास जो जमीन है उसका भी वह पूरा फायदा उठाती है। उसके पास करीब चार बीघे जमीन है। जिस पर वह धान और साग-सब्जियां उत्पादित करती है, जो घर में काम आ जाती हैं। इसके अतिरिक्त एक पुखरी भी बना रखी है जहां मछली उत्पादन होता है। इस पुखरी से जमीला को लगभग 5000 रुपये सालाना की आय होती है। उसने बड़े छोटे स्तर पर मधुमक्खी पालन भी किया हुआ है। घर के एक कोने में वह मधुमक्खी पालती है और शहद इकट्ठा करती है। इससे भी उसे लगभग 1000 रुपये सालाना की कमाई हो जाती है।

जमीला के यह सब काम घर को सुचारू ढंग से चलाने में बहुत सहयोग देते हैं और घर की आर्थिक अवस्था को बेहतर बना रहे हैं। जमीला के इन सब कामों में उसके पति का उसे पूरा योगदान मिलता है।

क्षेत्र प्रचार अधिकारी,
उत्तरी लखीमपुर,
असम

ग्रामीण क्षेत्रों में रोशनी का सफर

ममता

समग्र ग्रामीण विकास के लिए देश भर में जो प्रयास चल रहे हैं उनसे गांव वासियों की सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों में सुधार हुआ है। यह बात अलग है कि खर्च होने वाली धनराशि को देखते हुए किसे और कितना लाभ पहुंचा ? क्योंकि देश की आबादी का बड़ा हिस्सा आज भी निरक्षर है और किसी भी कागज पर अंगूठा लगाने से पूर्व उसकी असलियत जान लेना उसकी पहुंच से बाहर की बात है। गरीबी के बावजूद अधिसंख्य लोग बीड़ी, तम्बाकू, सिगरेट और शराब जैसे व्यसनों के आदी हैं। वे अपनी जेब हल्की करने के साथ-साथ अपने स्वास्थ्य को इतना खराब कर लेते हैं कि शरीर हड्डियों का ढांचा रह जाता है। ऐसी हालत में उनकी कार्य क्षमता का पता सहज ही लगाया जा सकता है। कमोबेश यह स्थिति पूरे देश में है अत: विकास के साथ सुधार भी जरूरी है।

उत्तर प्रदेश की कुल 12 करोड़ जनसंख्या में से 9-10 करोड़ लोग गांवों में रहते हैं तथा प्रदेश में एक लाख 12 हजार गांव और करीब 75 हजार ग्राम सभाएं हैं। अत: व्यापक स्तर संचार, सम्पर्क, शिक्षा एवं स्वास्थ्य की सुविधाओं का सवाल आता है। उत्तर प्रदेश के मेरठ, बाराबंकी और सुलतानपुर जिलों के एक हजार गांवों में पंचवर्षीय इन्डो कैनेडियन कृषि विस्तार परियोजना चल रही है जिसे वर्ष 88-89 के रबी मौसम में इन्डियन पोटाश लिमिटेड ने लागू किया था। इस परियोजना में दस दस गांवों की डोर एक एक कृषि वैज्ञानिक के हाथों में है। तीनों जिलों में महिला समाजशास्त्री और परियोजना प्रबन्धन भी है।

अत: परियोजना के अन्तर्गत स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य योजना तैयार करते हैं ताकि उसके बाद प्रगति की समीक्षा में उपलब्धियों का पता चला सके । यद्यपि सरकारी एजेन्सियों तथा स्वैच्छिक संगठनों आदि ने ग्रामीण विकास की दिशा में अनेक योजनाएं एवं कार्यक्रम अब तक चलाए, आर्थिक स्तर सुधारने के लिए रोजगार के साधन बढ़ाए गए, ऋण और अनुदान वितरित किए गए। लेकिन जब जब समीक्षा की गई तब तब प्रयासों को तेज करने की आवश्यकता महसूस हुई। कृषि विस्तार, कृषि-विज्ञान, ग्रामीण समाजशास्त्र, महिला, विकास, ग्रामीण अर्थशास्त्र, फसल सुरक्षा आदि के संबंध में जिला वार यथासंभव सुविधाएं तो जुटाई गईं लेकिन जागरूकता के अभाव में सुविधाओं को उस स्तर तक नहीं पहुंचाया गया जिस बिन्दु पर पहुंच कर तस्वीर कुछ और ज्यादा स्पष्ट होती। उत्तर प्रदेश के अलावा अन्य राज्यों में भी इससे मिलती जुलती ही स्थिति है।

इस परियोजना के उद्देश्य नि:संदेह अच्छे हैं क्योंकि यह सच है कि कृषि अनुसंधान एवं विस्तार सेवाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास करने तथा कृषि उपज बढ़ाने के लिए गांवों में चलने वाली विविध गतिविधियों के लक्ष्य को समूह में रखना होगा ताकि ग्रामवासियों के रहन सहन और सोचने के ढंग में परिवर्तन संभव हो सके। खासतौर पर ग्रामीण महिलाओं की स्थिति सुधारने पर बल दिया जाना जरूरी है ताकि विकास कार्यक्रमों में उनकी भागीदारी के सुपरिणाम स्पष्ट दिखाई दें। कम से कम हर जिले में एक महिला समाजशास्त्री हो जो ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रोत्साहित करे।

चयनित किसानों की आय में वृद्धि हेतु यानि निर्बल वर्ग के कृषकों का जीवन स्तर ऊंचा उठाने के उद्देश्य से उत्तर प्रदेश के तीनों चयनित जिलों में एक नई शुरूआत इस परियोजना में की गई थी। वर्ष 1990 में 'सम्पूर्ण कृषि क्षेत्र की प्रदर्शन योजना' उन लघु व सीमान्त कृषकों को जिनके पास लगभग एक हेक्टेयर जमीन है कृषि प्रबन्ध तकनीक के बारे में जानकारी देने के उद्देश्य से आरंभ की गई थी जिससे वे अपनी सीमित भूमि व उससे संबंधित व्यवसायों से ज्यादा से ज्यादा आय अर्जित कर सकें। यह प्रयोग सफल रहा। इसके प्रथम चरण में योजनाबद्ध ढंग से कार्य प्रारम्भ किया गया और इसका प्रभाव काफी अनुकूल रहा।

फलस्वरूप इस योजना के अन्तर्गत कुल 90 लघु व सीमान्त किसानों का चयन किया गया। योजना इन किसानों के खेतों पर हर मौसम में लागू है। इन कृषकों को उन्नतशील शस्य क्रियाओं और सन्तुलित लागत-व्यय के विषय में प्रशिक्षित किया गया है। साथ में उस क्षेत्र के लिए वहां की मिट्टी और जलवायु के अनुसार भिन्न-भिन्न फसल चक्रों की जानकारी भी दी गई है। इन कृषकों ने कृषि पर आधारित व्यवसायों जैसे दुग्ध पशुपालन, कुक्कुट

पालन इत्यादि को भी अतिरिक्त आय के स्रोत के रूप में अपनाया है क्योंकि उनके सामने सीमित आय की मजबूरी थी। अत: इस योजना में अपनी सीमित भूमि में उन्नतशील कृषि क्रियाओं को अपनाने से उनकी आय में पर्याप्त वृद्धि हुई है। उनके काम करने का ढंग सुधरा है। अब वे वैज्ञानिक विधियां अपनाते हैं। चल रही इस योजना के अन्तर्गत पहले तीन मौसमों में खरीफ 1990, रबी-1990-91, जायद 1991 में हुई इन कृषकों की आय आधार वर्ष (योजना लागू होने से पहले) की तुलना में हुई आय से औसतन 40 प्रतिशत तक बढ़ गई है जो कि अच्छा संकेत है।

चयनित गांवों में घर परिवार, आमदनी, शिक्षा आदि के सर्वेक्षण से पता लग जाएगा कि किसानों को नई किस्म के बीज, खेती के लिए नए तरीके, सन्तुलित खाद का प्रयोग, मिट्टी के पोषक तत्व, फसल सुरक्षा, नए यन्त्र , जल-प्रबन्ध आदि से संबंधित बिन्दुओं पर उपयोगी तथा व्यावहारिक बातें बताई जानी जरूरी हैं ताकि वे स्वयं उन्हें अपना सकें और सुधार के लिए खुद प्रयत्नशील रहें। कृषि विस्तार की इस योजना ने नई दिशा में स्वागत योग्य पहल तो की लेकिन ग्रामीण समुदाय के सामूहिक कल्याण हेतु चलाई जा रही विकास गतिविधियों में इसे ग्रामीणों का अपेक्षित सहयोग नहीं मिला। अपने देश में विश्वास का संकट गांवों में हर स्तर पर विद्यमान रहता है। अत: हितकारी होते हुए भी दूसरों की बात को लोग सहज ढंग से नहीं मानते।

कृषि लागत घटाने के लिए कदम

विस्तार कार्यक्रम के अन्तर्गत चल रही प्रमुख गतिविधियों में खेत प्रदर्शन, परिणाम परीक्षण, कृषक दिवस, विचार गोष्ठी, प्रशिक्षण, सामूहिक भ्रमण कार्यक्रम, मृदा परीक्षण हेतु सचल वाहन तकनीकी शिक्षा कार्यक्रम, कृषक सेवा केन्द्र तथा ग्रामीण क्षेत्रों में किसान मेले और नुमाईशों की मदद से किसान अपने रहन-सहन के स्तर में सुधार तथा उत्पादन में वृद्धि कर सकेंगे। किन्तु उपज से अधिकतम लाभ प्राप्त होने के लिए जरूरी है कि कृषि लागत को घटाया जाए। कृषि में काम आने वाली सामग्री तथा मजदूरी के बढ़ते मूल्यों ने सोचने पर मजबूर कर दिया कि किस प्रकार उपलब्ध संसाधनों का उपयोग बेहतर ढंग से किया जाए। नव विकसित उपकरणों तथा युक्तियों के प्रयोग की जानकारी होनी अति आवश्यक है और इसके लिए ग्रामीण क्षेत्रों के लिए उपयोगी प्रौद्योगिकी का प्रसार करना होगा। देश के कुल साढ़े छह लाख गांवों में से एक हजार के लिए ही सही ऐसी परियोजनाएं मील का पत्थर साबित हो सकती हैं। कुल मिलाकर ये परियोजनाएं बड़ी उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

कुल मिलाकर देखा जाए तो यही लगता है कि इस परियोजना का प्रभाव अच्छा है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोशनी का यह सफर जारी रहना बहुत जरूरी है।

एच-88 शास्त्री नगर
मेरठ - 250005 (उ०प्र०)

लेखकों से अनुरोध

''कुरुक्षेत्र'' के लिए मौलिक लेख, लघु तथा व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। रचनाएं टाइप कराकर दो प्रतियों में भेजें। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र नहीं होगा वे स्वीकार नहीं की जा सकेंगी। रचना के प्रकाशन के संबंध में पत्र-व्यवहार न करें। सभी रचनाएं सम्पादक कुरुक्षेत्र, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली 110001 के पते पर भेजें।

ग्रामीण महिलाओं के विकास के उपाय

✍ डा. विमला उपाध्याय

महात्मा गांधी भारत को आत्मनिर्भर बनाने का स्वप्न देखते थे। परावलंबन पाप है। आत्मघात है। स्वावलंबन हमारी शान है। हमारा गौरव है। भारत की आत्मा उसके साढ़े सात लाख गांवों में निवास करती है। इसलिए ग्रामोत्थान के बिना भारत का उत्थान संभव नहीं है। यही कारण है कि गांधी जी ग्रामीण स्वावलंबन पर जोर देते थे। गांव का प्रत्येक व्यक्ति स्वावलंबी बने, इसके लिए बड़ा जरूरी है कि महिलाओं को विकास का पर्याप्त अवसर मिले। उन्हें विकास की मुख्यधारा से जोड़ा जा सके। इसलिए कि पति पत्नी परस्पर पूरक हैं। ग्राम विकास में महिलाओं की अहम भूमिका है।

ऋगवेद में कहा गया है कि स्त्री ही गृहिणी है। वह है, इसलिए घर घर के समान लगता है। चार दीवारों का घेरा घर नहीं है। उसे सहेजना, सुव्यवस्थित करना महिलाओं का काम है। महिलाएं घर गृहस्थी न बसाएं, तो घर भूत का डेरा बन जाए। घर बसाने के लिए ममत्व, स्नेह एवं त्याग के साथ शिक्षा, श्रम एवं धन की जरूरत होती है। वह जमाना लद गया कि पुरुष बाहर का राजा है और स्त्री घर की रानी। अशोक वाटिका में सीता कैद है और राम लता वितानों से पूछते फिरते हैं, "हे खग मृग, हे मधुकर श्रेणी/तुम देखी सीता मृगनैनी।" अब पुरुष संघर्ष करता है, खटता है, तो नारी भी खेत खलिहान, बैंक, कार्यालय, स्कूल, कालेज में काम करती है। अब राम कहीं टंकक है तो सीता नर्स। इसलिए कि जीवनमान बदला है। जीवन में विपन्नता आई है। आर्थिक मार से जीवन लड़खड़ाने लगा है।

महिला का महत्व बनाम मानसिक प्रक्षालन

गांव की बात छोड़िए, शहरों में भी महिलाओं को दोयम (दूसरे) दर्जे का नागरिक माना जाता है। पुरुष का स्थान पहला है, तो स्त्री का दूसरा। दूसरा यानी उपेक्षा, अवहेलना। फ्रांस की क्रांतिकारिणी लेखिका सिमोन द बौउआर ने पूरे विश्व की महिलाओं का सर्वेक्षण किया है और इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि सर्वत्र नारी का दैहिक, आर्थिक, मानसिक और सामाजिक शोषण होता है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'सेकेंड सेक्स' प्रभा खेतान द्वारा" स्त्री उपेक्षिता "नाम से अनुदित, में महिला शोषण के, विविध स्तरों पर व्यापक चर्चा की है। ग्रामीण महिलाएं यों ही पिछड़ी हैं। अशिक्षा, अंधविश्वास, रुढ़िग्रस्तता एवं पराश्रय ने उनका जीवन नारकीय बना दिया है। पुरुष समझता है - "स्त्री मेरी चेरी है।" फलत: नारी न अपनी "स्व" "अस्मिता" को पहचान पाती है और न अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए कुछ कर ही पाती है। नतीजतन, उस पर शोषण की मार बढ़ती जाती है। तब न वह अपना कल्याण कर पाती हैं न पति परिवार और समाज का ही। फलत: गांव और भी पिछड़ता जाता है।

इसलिए नारी विकास की दिशा में पहला कदम है - उनका मानसिक प्रक्षालन, अपने को जानें, पहचानें, अपनी कीमत आंके और निर्णय लें कि उन्हें भी पुरुष के कदम में कदम मिलाकर चलना है। उनमें सृजन के साथ अर्जन की क्षमता है। वे कहीं कम नहीं हैं।

बराबरी का दर्जा बनाम आर्थिक स्वावलंबन

नारी पुरुष के बराबर है। उसे पुरुष की तरह सुविधा मिले। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुष के हक के बराबर अधिकार मिले। इस नारेबाजी से महिला का कल्याण संभव नहीं है। महिला को स्वयं आगे आकर अपना अधिकार छीनना होगा। लेना होगा। ग्रामीण महिलाएं इतनी रुढ़िवादी एवं परंपरावादी हैं कि उनके लिए विकास के अवसर खोजना कठिन है।

पहला उपाय है उन्हें शिक्षा मिले। अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था हो। जो लड़की विद्यालय नहीं जातीं उनके अभिभावक को प्रोत्साहन के रूप में कुछ नकद राशि दी जानी चाहिए ताकि वे अपनी लड़कियों को विद्यालय जाने के लिए प्रोत्साहित करें। कक्षा सात से ही रोजगारोन्मुख शिक्षा का प्रावधान होना चाहिए। विद्यालय के साथ-साथ कर्मशाला हो, जहां उन्हें सिलाई, बुनाई, कपड़ा, कटाई, रंगाई, हस्तशिल्प, कढ़ाई, नर्सिंग, पशुपालन, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, चटाई, डलिया आदि बनाने की कला सिखाई जाए। गांवों में ऐसी शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार के पास कई योजनाएं हैं। महिला कल्याण, परिवार कल्याण, बाल कल्याण, ग्रामीण विकास, आई.आर.डी.पी. आदि के तहत उन्हें शिक्षा के साथ-साथ आंशिक रोजगार दिया जा सकता है। जो महिलाएं बुजुर्ग हो गयी हैं, अशिक्षित हैं, उनके लिए उचित समय पर प्रशिक्षण शिविर की व्यवस्था हो। वहां उन्हें

एक ओर रुढ़िवादिता, अंधविश्वास के अंधकार से प्रगति के प्रकाश में लाया जाए। उन्हें प्रारंभिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, वयस्क शिक्षा योजना के अंतर्गत दी जाए तथा दूसरी ओर लघु एवं कुटीर उद्योगों का प्रशिक्षण दिया जाए। श्रम की प्रतिष्ठा समझाई जाए। उदाहरणार्थ एक महिला यदि अपने पिछवाड़े में नियमित रूप से बागवानी करती है, तो प्रतिदिन दस रुपये कमा सकती है। हरी सब्जी, साग, फल आदि घर में देकर। दूसरी महिला यदि खजूर ताड़ के पत्ते (एक प्रकार की घास, जिससे डलिया बनाया जाता है) को रंग कर चटाई, डलिया, डोलची आदि का निर्माण करती है, तो प्रतिदिन तीस रुपये कमा सकती है। इसी प्रकार मुर्गी, गाय, मधुमक्खी पालन में भी कमाई है। उसे यही सोचना पड़ेगा कि वह भी कमा सकती है और निश्चय ही पति को आर्थिक सहयोग दे सकती है। इस संकल्प और उसके क्रियान्वयन से उसमें आत्मविश्वास जगेगा। आत्मनिर्भरता आयेगी और पुरुष से बराबरी का हक स्वयं ही मिलेगा। आर्थिक समानता, के बिना सारी समानता केवल कल्पना है।

सुनियोजित परिवार और समुचित शिक्षा

गांवों में महिलाओं की बदतर हालत का कारण बढ़ती हुई आबादी है। कन्या योंही उपेक्षिता है, उस पर परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक हुई, तो उसकी और भी उपेक्षा हो जाती है। इसलिए महिलाएं जिस प्रकार हो अपने पास के परिवार नियोजन केन्द्र से संपर्क स्थापित कर परिवार नियोजित करें। उन्हें यह समझना पड़ेगा कि लड़के लड़की में भेद नही करना है। फलत: दो या तीन संतान का समुचित लालन-पालन हो। उनकी समुचित शिक्षा की व्यवस्था हो। कम संतान को जन्म देना तथा उन्हें उचित शिक्षा देना ये दो काम ऐसे हैं जिनसे ग्रामीण महिला का स्वयं विकास होगा। इससे देशोत्थान को गति मिलेगी। प्रबुद्ध नागरिक बनेंगे। स्वामी विवेकानंद ने कहा है- ''मुझे दस सुशिक्षिता, सुसंस्कारी महिलाएं दें मैं भारत का भविष्य उज्ज्वल कर दूंगा।'' महिलाओं में यह जागरण उचित शिक्षा से ही आ सकता है ताकि वे अपने गांव, समाज एवं राष्ट्र के लिए सोच सकें। कुछ कर सकें। उनके प्रति संकल्पित हों। एकला चलो रे: कोई साथ न आए, तो रवीन्द्र नाथ ठाकुर के अनुसार अकेले चला जाए। महात्मा गांधी ने लिखा है : ''तुम पूरे देश के उद्धारक का उत्तरदायित्व अपने सिर पर मत लो। तुम्हारे जिम्मे जो काम है उसे निष्ठापूर्वक करो। इसी से देश का उद्धार होगा।'

पुरुष समाज सेवी संस्थाओं तथा सरकार की भूमिका

समाज व्यक्ति से सदा ऊपर होता है। समाज व्यक्ति को व्यक्तित्व देता है। पुरुष समाज का अंग है जो स्त्री का पूरक भी है। इसलिए समाज में पुरुषों का रवैया नारी के प्रति सहानुभूति पूर्ण तथा सहयोगात्मक होना चाहिए। कभी पुरुष ग्रामीण महिला के विकास में किसी प्रकार बाधा न खड़ी करें। संभव है उनके अहंकार को ठोकर लगे- ''जो कल तक मेरे संकेत पर कठपुतली बनी फिरती थी, आज अपने पांव पर खड़ी हो गयी।'' नारी का जगना, विकसित होना पुरुष के उत्थान का द्योतक है। इसलिए न केवल पतियों का वरन् गांव में सभी पुरुषों का कर्तव्य है कि उन्हें उनकी योजना में मदद करें। रोटरी कलब, यूनियन क्लब, दुर्गावाहिनी, शांतिवाहिनी, भारत विकास परिषद, ऐसी अनेक स्वयंसेवी संस्थाएं हैं, जो ग्रामीण परिवेश में नाना शिविर, कैंप, प्रदर्शनी, कर्मशाला, आयोजित कर, ग्रामीण महिलाओं में विकास की ज्योति जला सकती हैं। सरकार ग्रामीण महिलाओं के विकास के लिए कृतसंकल्प है। पुरुष, महिला तथा स्वयंसेवी संस्थाओं का कर्तव्य है कि वे सरकार के प्रतिनिधियों, एवं अधिकारियों से संपर्क बनाए रहें तथा ग्रामीण महिला विकास संबंधी योजनाओं के क्रियान्वयन में क्रियात्मक सहयोग दें। तभी एक एक ग्रामीण महिला की प्रगति सुनिश्चित है।

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,
अर्थशास्त्र विभाग,
एस.एस.एल. एन.टी.
महिला महाविद्यालय
धनबाद - 826001

पंजाब में रोजगार और भविष्य की संभावनाएं

✍ गिरीश नौटियाल

पंजाब पिछले एक दशक में अशांति के माहौल से गुजरा है। इस दौरान राज्य के उद्योग धन्धों को भी परेशानियां उठानी पड़ी हैं। अब चूंकि हालात सामान्य होते जा रहे हैं, लोगों में नया विश्वास पैदा हो रहा है लोग व व्यवसायी पुन: अपने-अपने कार्यों में लग रहे हैं - शायद इसलिए कि पंजाब की दशकों से चली आ रही सम्पन्नता की साझी विरासत को एक बार फिर समृद्धि के आयाम तक पहुंचाया जा सके।

इस समय राज्य में युवाओं के लिए कई प्रशिक्षण शिविर चलाये जा रहे हैं, ताकि युवक प्रशिक्षण प्राप्त कर अपने-अपने रोजगार में लग सकें। इस तरह के शिविर अभी तक कपूरथला, नाभा व पटियाला में स्थापित किए गये हैं। सीमावर्ती जिलों के अनेक बेरोजगार युवक इनमें प्रशिक्षण प्राप्त कर लाभान्वित हो चुके हैं। पूरे देश में पंजाब ही एक ऐसा राज्य है जिसने इस तरह के प्रशिक्षण एवं रोजगार शिविर स्थापित कर काफी हद तक युवाओं को रोजगार दिलाने में सफलता हासिल की है। इन शिविरों की शुरूआत से लेकर अब तक बड़ी संख्या में युवाओं को पंजाब राज्य विद्युत बोर्ड, पंजाब वायरलैस, संचार एवं इलैक्ट्रानिक्स लिमिटेड, केन्द्रीय रिजर्व पुलिस, चण्डीगढ़ पुलिस, अजनाला शुगर मिल्स एवं सहकारी क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये गये हैं। प्राप्त आंकड़ों से पता चलता है कि अभी तक 12,158 युवाओं को राष्ट्रीय सद्‌भावना, तकनीकी शिक्षा एवं सशस्त्र सेनाओं के लिए प्रशिक्षण दिया जा चुका है करीब 1500 युवक सशस्त्र सेनाओं में भर्ती के लिए प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। साथ ही 8,027 युवाओं को विभिन्न क्षेत्रों में पूर्ण रोजगार के अवसर सुलभ कराये गये हैं। इसके अलावा दूसरे क्षेत्रों- जैसे वृक्षारोपण, सुअर पालन, यातायात, मछली पालन और मधुमक्खी पालन में भी युवाओं की सहभागिता काफी बढ़ी है।

चूंकि पंजाब की 70 प्रतिशत आबादी गांवों में ही निवास करती है, और यही गांव प्रदेश के विकास की रीढ़ भी हैं, अत: ग्रामीण विकास कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान देना किसी भी सरकार के लिए अपरिहार्य हो जाता है। इस समय ग्रामीण इलाकों में कई कल्याणकारी योजनाएं चलायी जा रही हैं, जिनमें ग्रामीण युवाओं स्वरोजगार कार्यक्रम, महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम तथा ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के पानी पहुंचाने का कार्यक्रम प्रमुख हैं। ग्रामीण युवा इन कार्यक्रमों में अपनी सक्रिय भूमिका निभायें, इसके लिए उन्हें समय-समय पर स्कूल व कालेज के राष्ट्रीय सेवा योजना कार्यक्रमों से जोड़ा जा रहा है।

कृषि क्षेत्र में अभी भी पंजाब पूरे देश में अग्रणी स्थान पर है। देश का एक तिहाई गेहूं खाद्यान्न के रूप में अकेले पंजाब से ही मिलता है। 28 प्रतिशत कपास की आपूर्ति भी पंजाब से ही संभव हो पाती है। पंजाब में गेहूं का उत्पादन प्रति हेक्टेयर 3.8 टन, धान का उत्पादन 3.3 टन तथा कपास का उत्पादन 6.07 क्विंटल है, जो कि उत्पादन के मामले में पूरे देश में एक रिकार्ड है। राज्य कृषि विभाग की विशेष योजना के तहत पूरे क्षेत्र में विकसित किस्म के बीजों से और अधिक उत्पादन बढ़ाने की योजना है। अभी तक राज्य के 2,517 गांवों में 7,637 प्रगतिशील उत्पादकों को 5,000 टन विकसित बीजों का वितरण किया गया है तथा आगामी चार सालों में प्रदेश के कोने-कोने में इन विकसित किस्म के बीजों को पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया है। इसी तरह छोटे किसानों को कृषि में काम आने वाली मशीनरी के उपयोग के लिए पर्याप्त रूप से सब्सिडी दी जा रही है।

कृषि के साथ-साथ लघु उद्योगों में भी पंजाब की विशिष्ट पहचान है। यहां की हौजरी, साइकिल व सिलाई की मशीनें तो आज भी देश-विदेश में मशहूर हैं। देखा जाए तो यहां की सबसे बड़ी पूंजी मानव शक्ति में ही निहित है। कारीगरी व उद्योगपतियों की दक्षता के कारण पंजाब का लघु उद्योग अभी भी शीर्ष स्थान पर है। किसी भी उत्पाद वस्तु की गुणवत्ता के मामले में तथा बौद्धिक स्तर पर प्रदेश की विशेष धाक बनी हुई है। इसका अनुमान लगाने के लिए एक उदाहरण ही पर्याप्त है। बात कोई पचास के दशक की है। कहते हैं, लघु उद्योगपतियों का एक दल जापान में वहां के कुछ उद्योगों को देखने गया। इस दल में लुधियाना के शिल्पकार उद्यमी भी शामिल थे। दल जब एक कारखाने को देखने गया तो दल के सदस्यों को कारखाने के उस भाग में नहीं जाने दिया गया जिसमें नयी मशीनें लगायी गयी थीं। कारखाने के प्रबन्ध मण्डल को यह डर था कि यदि लुधियाना

शेष पृष्ठ 28 पर

वृक्ष का आह्वान

✍ ललन कुमार प्रसाद

तुम मुझे रोपित करो तो मैं तुम्हें घरबार दूंगा,
मैं तुम्हें धन धान्य दूंगा।
शिशुओं को पालना दूंगा,
बच्चों को खिलौना दूंगा,
जवानों को सेज दूंगा,
बूढ़ों को लाठी दूंगा,
मृतकों को चिता दूंगा,
तुम मुझे रोपित करो तो मैं सदा तुम्हारा साथ दूंगा,
मैं तुम्हें घरबार दूंगा,
मैं तुम्हें धन-धान्य दूंगा।

रसीले फल दूंगा, सुवासित फूल दूंगा,
पौष्टिक अन्न दूंगा, सुरक्षित ईंधन दूंगा,
सुन्दर दुकान दूंगा, खूबसूरत मकान दूंगा,
उद्योग-कारोबार के लिए लकड़ी का अम्बार दूंगा।
तुम मुझे रोपित करो तो बढ़ती बेरोजगारी को
जीविका की लगाम दूंगा,
मैं तुम्हें घरबार दूंगा,
मैं तुम्हें धन-धान्य दूंगा।

चिड़ियों की चहक दूंगा,
फूलों की महक दूंगा,
नदियों का कलरव नाद दूंगा,
घास की हरियाली दूंगा,
तुम मुझे रोपित करो तो धरा पर
स्वर्ग का अहसास दूंगा,
मैं तुम्हें घरबार दूंगा,
मैं तुम्हें धन-धान्य दूंगा।

मौसम के बिगड़ते मिजाज को थाम लूंगा,
बौराती नदियों को लगाम दूंगा,
प्यासी धरती को वृष्टि का सौगात दूंगा,
बस तुम्हारा एक कोमल स्पर्श ही काफी है –
धरती की रुग्ण काया को सौन्दर्य का उपहार दूंगा,
मैं तुम्हें घरबार दूंगा,
मैं तुम्हें धन-धान्य दूंगा।

जेठ की झुलसती दोपहरी में,
सघन पत्तों की ठंडी छाव दूंगा,
शीतल, निर्मल, मन्द बयार दूंगा,
वर्षा की ठंडी रिमझिम ठंडी फुहार दूंगा,
तरो-ताजगी का अनुपम उपहार दूंगा,
तुम मुझे रोपित करो तो तपती गर्मी में
एयर-कंडीशनिंग का आराम दूंगा,
मैं तुम्हें घरबार दूंगा,
मैं तुम्हें धन-धान्य दूंगा।

जहरीली गैसों का शोषण करूंगा,
तेजाबी बारिश का हरण करूंगा,
भू-स्खलन को सबल प्रतिरोध दूंगा,
पसरते रेगिस्तान को लगाम दूंगा,
नष्ट हो रही पृथ्वी को संभाल लूंगा,
तुम मुझे रोपित करो तो मैं कवच का काम दूंगा,
मैं तुम्हें घरबार दूंगा,
मैं तुम्हें धन-धान्य दूंगा,

**शिव मन्दिर के बगल में,
बाकरगंज बजाजा गली,
बांकीपुर
पटना-800004**

ग्रामीण जनसंख्या का स्वरूप और विकास समस्याएं

✍ डॉ0 बी.एल. नागदा

भारत गांवों का देश है। यहां 74.28 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। सन् 1991 की जनगणना के अनुसार देश की आबादी 84.43 करोड़ है। उसमें से 62.71 करोड़ जनसंख्या ग्रामीण है। गांव हमारे देश की संस्कृति के प्रतीक हैं। प्राचीन काल में गांव प्राय: स्वावलंबी होते थे। ग्रामीण वासियों में आपसी सहयोग की भावना होती थी। आजादी के बाद परिवहन और उद्योगों का विकास होने लगा। इससे व्यक्तिवाद की भावना पनपने लगी। संयुक्त परिवारों का विघटन हुअ और गांवों का वैभव समाप्त होने लगा। परिवार अपने आप में एक स्वावलंबी इकाई के रूप में था परन्तु जनसंख्या वृद्धि से परिवार का विघटन हुआ। भूमि पर जनसंख्या दवाब बढ़ा, कृषि पर निर्भरता की कमी आयी और बेरोजगारी बढ़ी। जमीन का बंटवारा होने लगा। जमीन छोटे-छोटे टुकड़ों में विभक्त हो गयी और लोग रोजगार की तलाश में गांवों से नगरों की ओर पलायन करने लगे जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक प्रकार की समस्याओं का जन्म होने लगा।

ग्रामीण रहन सहन

ग्रामीण जनसंख्या के आधे से अधिक लोग ऐसे गांवों में निवास करते हैं जिनकी आबादी 500 से 2000 तक की है। परन्तु इनमें से अधिकांश गांवों में मूलभूत आवश्यकताएं जैसे पेयजल, चिकित्सा, शिक्षा आदि का अभाव है। गांवों का आकार भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप होता है। बड़े आकार के गांव देश के मैदानी और उपजाऊ प्रदेशों में है। ऐसे प्रदेश उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिमी बंगाल, तमिलनाडु में है। यहां कृषि की उर्वरक क्षमता अधिक है और ग्रामीण विकास भी अपेक्षाकृत अच्छा हुआ है। जबकि छोटे गांव देश के पहाड़ी, पठारी और रेगिस्तानी भागों में हैं जहां वर्षा की कमी है। राजस्थान, असम, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश में गांव अभी तक मूलभूत सुविधाओं से वंचित है।

जनसंख्या का स्वरूप

देश में ग्रामीण जनसंख्या के स्वरूप में काफी असमानताएं मिलती है । ग्रामीण जनसंख्या असमान रूप से वितरित है। सबसे अधिक ग्रामीण जनसंख्या हिमाचल प्रदेश (91.30), सिक्किम (90.88 प्रतिशत), असम (88.92 प्रतिशत), बिहार (86.33 प्रतिशत) में है जबकि सबसे कम जनसंख्या मिजोरम (43.80 प्रतिशत), गोवा (58.98 प्रतिशत) और महाराष्ट्र में (61.27 प्रतिशत) निवास करती है।

जिन राज्यों में औद्योगिक विकास कम हुआ है वहां ग्रामीण जनसंख्या की अधिकता है। ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि में भी असमानता है। 1981-91 में नगालैण्ड में सबसे अधिक जनसंख्या वृद्धि हुई (53.58), जबकि सिक्किम (28.91) और अरुणाचल प्रदेश में (27.64) वृद्धि दर रही। भारत में ग्रामीण औसत जनसंख्या वृद्धि दर (19.71) है। देश में11 राज्य ऐसे हैं जहां ग्रामीण जनसंख्या की वृद्धि दर औसत दर से कम है। इन राज्यों में औद्योगिक और ग्रामीण विकास तुलनात्मक दृष्टि से अधिक हुआ। 1991 की जनगणना के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में लिंग अनुपात 941 है। केरल और हिमाचल प्रदेश में क्रमश: 43 और 13 महिलाएं प्रति हजार पुरुषों पर अधिक हैं। इसके विपरीत हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश और अरुणाचल प्रदेश में महिलाओं की संख्या पुरुषों की अपेक्षा कम है। यह कमी 150 महिलाओं से 250 महिलाएं प्रति हजार पुरुषों पर है।

देश के दस राज्यों में औसत लिंग अनुपात से महिलाओं की संख्या कम है। किसी भी जनसंख्या में लिंग अनुपात महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को दर्शाता है। जनसंख्या में महिलाओं की संख्या कम होना महिलाओं की दयनीय स्थिति की ओर संकेत करता है।

महिलाओं की स्थिति

ग्रामीण महिलाओं की स्थिति बड़ी दयनीय है। देश में 80 प्रतिशत महिलाएं अशिक्षित और 70 प्रतिशत गृहकार्य में लगी हुई हैं। उच्च जन्म दर से 40 प्रतिशत बच्चे अल्प पोषित हैं और 60 प्रतिशत महिलाओं में रक्त की कमी और अन्य बीमारियां हैं। कुपोषण के कारण देश में 3 लाख माताओं की प्रतिवर्ष प्रसव के दौरान मृत्यु हो जाती है। चिकित्सा सुविधाओं के अभाव में 90 प्रतिशत प्रसव घर पर ही परम्परागत दाई करती है। सामाजिक रीति रिवाजों ने महिलाओं की स्थिति को और भी दयनीय बना दिया है। बाल विवाह, दहेज प्रथा और पुत्र प्राप्ति की बलवती इच्छाओं से समाज में महिलाएं घुटन महसूस करती हैं। देश में प्रति वर्ष ग्रामीण जनसंख्या में 1.25 करोड़ लोग बढ़ जाते हैं।

इतनी बड़ी जनसंख्या के कारण न केवल सामाजिक और आर्थिक विकास के प्रयास कमजोर सिद्ध होते हैं। परिणामस्वरूप ग्रामीण महिलाओं का एक बड़ा भाग गरीबी बेरोजगारी, अशिक्षा, कुपोषण एवम् अल्पपोषण से पीड़ित है। फलत: ग्रामीण विकास में महिलाओं का योगदान नगण्य है। महिलाओं का विकास कर ग्रामीण विकास को गति दी जा सकती है।

स्वास्थ्य सुविधाएं

सन् 1952 में देश में सर्वप्रथम जनसंख्या नीति बनायी गयी। इस नीति के अन्तर्गत परिवार नियोजन को स्वैच्छिक रूप में लागू किया गया था। स्वास्थ्य की दृष्टि से दो विकल्प रखे गये। प्रथम विकल्प में ग्रामीण इलाकों में स्वास्थ्य सुविधाओं को बढ़ावा देकर मृत्युदर, बाल मृत्युदर, मातृ मृत्यु दर और बीमारी दर को कम करना। द्वितीय विकल्प में ग्रामीण जनसंख्या को नियंत्रित करना। ग्रामीण समुदाय ने प्रथम विकल्प को सहज ही स्वीकार कर लिया परन्तु दूसरे विकल्प पर अधिक जोर नहीं दिया गया जिससे ग्रामीण जनसंख्या में विस्फोटक स्थिति पैदा हो गयी। 1951 में जन्मदर 45 प्रति हजार थी जो 1989 में घटकर 34.2 प्रति हजार हो गयी। इसी काल में मृत्युदर 38 प्रति हजार से घटकर 13 हजार हो गयी। मृत्यु दर में जन्मदर की अपेक्षा तीन गुणी अधिक गिरावट आयी जिससे जनसंख्या द्रुत गति से बढ़ी। इस तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या ने ग्रामीण विकास की सभी योजनाओं को चौपट कर दिया। ग्रामीण जनसंख्या की संरचना भी विकास में बाधक है। देश में 40 प्रतिशत जनसंख्या बच्चों की है जिनको स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाना भी कठिन कार्य है। अन्य देशों की तुलना में हमारे पास स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी है। ग्रामीण इलाकों में एक लाख की आबादी पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं दस हजार की आबादी पर एक उपस्वास्थ्य केन्द्र है। 35000 व्यक्तियों पर एक डाक्टर एवं 500 व्यक्तियों पर एक परिचारिका है। चिकित्सा संरचना की दृष्टि से देश में इस क्षेत्र में अभी काफी विकास करना बाकी है।

गरीबी

देश की एक तिहाई जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है। देश की 47 प्रतिशत जनसंख्या 53 प्रतिशत आबादी पर निर्भर कर रही है। इस आबादी में एक तिहाई बेरोजगार और महिलाएं हैं। कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत काफी कम है। यानी निर्भरता अनुपात 1:5, एक पर पांच व्यक्ति निर्भर हैं। जनसंख्या वृद्धि होने से लगातार निर्भरता अनुपात में वृद्धि हो रही है। बढ़ती हुई ग्रामीण जनसंख्या हेतु प्रति वर्ष 18 लाख टन अनाज, 10 करोड़ मीटर कपड़ा, 1.21 लाख विद्यालय, 3.55 लाख अध्यापक, 23 लाख मकान एवं 33 लाख व्यक्तियों को रोजगार की आवश्यकता होती है। यह व्यय भारत के ग्रामीण विकास में बाधक है। देश में पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा ग्रामीण विकास के अनेक कार्यक्रम चलाने के बावजूद भी ग्रामीण क्षेत्र गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाओं जैसी समस्याओं से घिरे हुए हैं। देश में 30 करोड़ व्यक्ति निपट गरीबी में जीवन निर्वाह कर रहे हैं। देश में 1911 में 19 करोड़ अशिक्षित थे जो 1991 में बढ़कर 48 करोड़ हो गये। 40 करोड़ व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में अशिक्षित हैं। देश की 30.4 करोड़ ग्रामीण महिलाओं में से केवल 7.6 करोड़ महिलाएं शिक्षित हैं। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार 21वीं सदी में विश्व के सबसे अधिक अशिक्षित व्यक्ति भारत में होंगे। पिछले 40 वर्षों में शिक्षा के खर्च में 15 गुणी बढ़ोत्तरी होने के बावजूद भी आज देश के 40 प्रतिशत स्कूलों में श्यामपट्ट भी नहीं हैं। 60 प्रतिशत स्कूलों में बच्चों को पानी की सुविधाएं नही हैं। एक चौथाई स्कूल ऐसे है जहां पर एक अध्यापक के सहारे स्कूल चल रहा है। बढ़ती जनसंख्या को चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध कराना भी कठिन हो गया है। देश में आधे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवम् तीन चौथाई स्वास्थ्य उपकेन्द्रों पर प्राथमिक उपचार हेतु आंशिक सुविधाएं उपलब्ध हैं। स्वास्थ्य कार्यकर्ता हैं परन्तु औषधि के अभाव में ये केन्द्र प्राय: मृत हैं। यहां से गरीब व्यक्तियों को किसी भी चिकित्सा सुविधाओं की आशा नहीं है।

कृषि भूमि पर दबाव

देश में बढ़ती हुई जनसंख्या के खाद्यान्न की पूर्ति हेतु हरित क्रांति का प्रारंभ हुआ, ग्रामीण इलाकों में सघन कृषि की जाने लगी। फलत: ग्रामीण वातावरण पर बुरा असर पड़ा। गहन खेती के कारण चरागाहों और वनों की भूमि को कृषि भूमि में बदला गया। 1951 में 11.8 करोड़ हेक्टेयर कृषि भूमि थी जो 1985 में बढ़कर 14 करोड़ हेक्टेयर हो गयी। कृषि भूमि के विस्तार से वनों और चरागाहों का विनाश हुआ और इससे वर्षा चक्र में परिवर्तन आया। भूमि अपरदन बढ़ा और बाढ़ों के क्षेत्र में वृद्धि हुई। सघन कृषि में कई प्रकार के कीटनाशकों एवं उर्वरकों के प्रयोग से भूमि अम्लता और लवणता बढ़ी जिससे भूमि ऊसर हो गई। कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, की एक रिपोर्ट के अनुसार देश में 17.5 करोड़ हेक्टेयर भूमि वातावरण अवक्रमण से ग्रसित है। ग्रामीणों के शहरों की ओर पलायन करने से बड़े शहरों के आकार में

बढ़ोत्तरी हुई है। शहरों में आवास और अन्य सुविधाओं की कमी होती जा रही हैं। गरीब लोग गन्दी बस्तियों मे निवास करने को मजबूर हो रहे हैं। देश के चार महानगरों बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली एवम् मद्रास में 20-30 प्रतिशत जनसंख्या झुग्गी झोपड़ियों में निवास कर रही है। ये ग्रामीण जनसंख्या के शहरों की ओर पलायन का परिणाम है। गांवों के विकास हेतु गहन श्रमिक खेती को ही बढ़ावा देना चाहिए क्योंकि कृषि में तकनीकीकरण होने से ग्रामीणों में बेरोजगारी और भूखमरी की समस्याओं में बढ़ोत्तरी हुई है।

ग्रामीण विकास के प्रयास

ग्रामीण विकास का अर्थ गांवों के लोगों का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास करना है। सन् 1938 में सर्वप्रथम ग्रामीण अर्थव्यवस्था को ठीक करने के लिए एक राष्ट्रीय विकास समिति का गठन किया गया। देश की आबादी के बाद 1951 में पंचवर्षीय योजनाओं का प्रारंभ हुआ। इन योजनाओं के द्वारा ग्रामीण विकास हेतु नाना प्रकार के कार्यक्रम चलाये जाने लगे। सन् 1952 में सामुदायिक विकास परियोजनाएं प्रारंभ की गयीं। सन् 1950 में पंचायती राज्य की स्थापना करके ग्रामीण विकास का भार पंचायतों को सौंपा गया एवं यह माना गया कि जनता का जनता के द्वारा विकास करें।

सन् 1960 में सघन कृषि कार्यक्रम बढ़ाया गया। सन् 1962 में पर्वतीय विकास कार्यक्रम, 1991 में सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम 1972 में ग्रामीण गारन्टी कार्यक्रम, 1976 में बीस सूत्रीय कार्यक्रम, 1977 में काम के बदले अनाज कार्यक्रम और भूखमरी विकास कार्यक्रम, 1978 में समन्वय विकास कार्यक्रम, 1979 में ट्राइसेम, 1980 में राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम और 1988 में जवाहर रोजगार योजना कार्यक्रम चलाये गये। इन सभी विकास कार्यक्रमों के बावजूद ग्रामीण विकास अभी तक अधूरा ही है क्योंकि ग्रामीण जनसंख्या की वृद्धि दर अधिक होने के कारण प्रति व्यक्ति भूमि की कमी हुई, कुपोषण और अल्पपोषण, बेरोजगारी, अशिक्षा, भूखमरी, अपराध, नैतिक पतन, आवासीय सामाजिक बिखराव आदि समस्याएं प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। गरीबों एवम् अमीरों के बीच खाई चौड़ी होती जा रही है। विकास योजनाएं जो नाम मात्र के लिए देश में चलाई जा रही है। उनका प्रभाव इस तरह की परिस्थितियों में नगण्य ही है।

अनुसंधान अधिकारी
जनसंख्या अनुसंधान केंद्र,
सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर - 313001,
राज.

पृष्ठ 24 का शेष

के शिल्पकारों की एक निगाह मशीनों पर पड़ गयी तो वे उसकी नकल कर ऐसी ही मशीनों के निर्माण में कामयाब हो जायेंगे।

पंजाब में बड़े-बड़े उद्योग शुरू करने में कुछ कठिनाइयां हैं। सरकार के बार-बार आग्रह एवं विशेष सुविधा मुहैया कराने के बाद भी बड़े उद्योगपति यहां पर अपना कारोबार करने में कतराते रहे हैं। ऐसा सिर्फ सुरक्षा के कारणों से नहीं है। कच्चे माल की उपलब्धता न होने तथा समुद्र तट से काफी दूर होने के कारण बड़े उद्योगपति इसे अपने अनुकूल नहीं मानते। लेकिन ऐसा भी नहीं कि प्रदेश में बड़े उद्योगों का अकाल है। जब से कृषि पर आधारित उद्योगों में पहल हुई है तभी से यहां पर अनेक निजी एवं सरकारी क्षेत्र के उद्योग स्थापित हो चुके हैं। राज्य के कई क्षेत्र तो इसीलिए विकसित किए गये हैं ताकि उद्यमियों को अपना उद्योग स्थापित करने में अनुकूल वातावरण मिल सके। मोहाली, राजपुरा, मलेर कोटला आदि नाम इस संदर्भ में लिये जा सकते हैं। राज्य में बदली हुई परिस्थितियों में जहां एक ओर उद्योग विकास की नयी संभावनाएं दिखने लगी हैं तथा मध्यम और बड़े उद्योगों को तीव्र विकास में सहायक माना जा रहा है, वहीं लघु उद्योगों को भी उपेक्षित नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि सबसे पहली जरूरत राज्य में खुशहाली की है। तभी बेरोजगारी की स्थिति से निपटा जा सकता है।

साभार
पत्र सूचना कार्यालय

नीम हकीम है

चन्द्रकान्ता शर्मा

प्रकृति की अनुपम देन है नीम। यह धरती का अति प्राचीन वृक्ष है। सिंधु घाटी सभ्यता से ही नीम के वृक्ष का पता चलता है, मोहनजोदड़ो की खुदाई में भी नीम वृक्ष का उल्लेख मिलता है, संभवत: कोई गांव ऐसा नहीं है, जहां नीम के पेड़ नहीं हों। नीम लगाना भी ग्राम्य जीवन की एक परम्परा बनी रही है। गांव, गलियारों, खेतों एवं मकानों के आगे दालानों में नीम लगाना शुभ भी माना जाता है। इसका मूलाधार नीम के वे गुण हैं जो उसे प्राकृतिक रूप से मिले हैं। इस दृष्टि से नीम खुद हकीम भी है इसकी हवा से काया निरोगी रहती है। इसलिए इसे छूकर बहने वाली हवा को मुफीद माना गया है। नीम इतना घना और विशाल होता है कि इसकी छाया शीतल तथा सुकून प्रद होती है। नीम की पत्ती, निबोली, तना, तने की छाल तथा जड़े अदभुत चमत्कारिक दवा का कार्य करती हैं। इसलिए आयुर्वेद दवाओं से लेकर ऐलोपैथी दवाओं में इसके पत्तों, छाल एवं निबोलियों को प्रयोग किया जाता है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि भारतीय मूल का वृक्ष होने के बाद भी इसे अब उपेक्षित समझा जा रहा है, जबकि अमरीका में नीम का वृक्षारोपण सघनता से अभियान रूप में किया जा रहा है। यहां प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि यह बहुत ही शक्तिशाली कीट-नाशक है। हर प्रकार के कीट-कीड़े इससे नष्ट किए जा सकते हैं।

नीम की लकड़ी का महात्म्य ही अद्भुत है। कड़वी होने से इसमें दीमक या अन्य कोई कीड़े नहीं लग पाते तथा इसी से यह लकड़ी वर्षों तक खराब नहीं होती और टिकाऊ बनी रहती है। इससे बनने वाले किवाड़ तथा अन्य समान वर्षों तक खराब भी नहीं होते। नीम की लकड़ियों के खिलौने तथा देव प्रतिमायें बनाने का प्रचलन रहा है। पहले पालने, गाड़ियों के पहिये आदि में इसकी लकड़ी का उपयोग बहुतायत से किया जाता रहा है, नीम की छाल को घिसकर लगाने पर फोड़े भी ठीक हो जाते हैं। नीम की निबौली कच्ची होने पर अत्यधिक कड़वी होती है, लेकिन पक जाने के बाद उसमें कड़वाहट कम होकर मिठास आ जाती है। इसे तोते और अन्य पक्षी चाव से खाते हैं। इनका तेल भी निकाला जाता है जो अनेक औषधियों तथा कीटनाशक रूप में काम में लाया जाता है। इससे साबुन भी बनता है। इससे बनी खली से जहां खाद का काम लिया जाता है वहीं कीड़े लगी फसल पर डालकर कीड़ों का नाश किया जा सकता है। यह साबुन त्वचा रोगों में रामबाण माना गया है। इसका रस फसलों पर भी कीटनाश के लिए छिड़का जाता है।

इस वृक्ष की डाली से दांतुन बनाकर दांत मांजने से वे मजबूत रहते हैं तथा दांतों के बीसियों रोगों से बचा जा सकता है। नीम का वर्णन हमारे धार्मिक और औषधि शास्त्रों में मिलता है तथा इसकी महत्ता का विस्तार से वर्णन किया जाता है। बुखार में इसकी छाल का काढ़ा बना कर देने से पुराने से पुराने बुखार से मुक्ति मिलती है। एग्ज़िमा, पित्ती एवं दाद आदि में भी नीम का प्रयोग होता है। गठिया के दर्द में भी नीम रामबाण होता है। पेट की अनेक बीमारियां इसकी कच्ची पत्तियां पीसकर पीने से मिट जाती हैं। पेट कृमियों में भी नीम का अदभुत योग है। कपड़ों की तहों में इसकी पत्तियां अथवा अनाज में इसके पत्ते डाल देने से कोई कीटाणु पैदा नहीं होते, पेशाब के रोगों में भी नीम का प्रयोग अम्लीय प्रभाव से लाभ देता है। अनेक परिवार नियोजन से जुड़ी दवाओं में भी नीम का प्रयोग हुआ है। इसके तेल को भी प्रजनन-रोधी माना गया है। इसके अलावा अनेक दवाओं के निर्माण में इस पर शोध चल रहा है। टिटेनस रोग में भी नीम के विविध भाग काम में लिए जा रहे हैं।

भारत में नीम के करीब डेढ़ करोड़ वृक्ष हैं। नीम दस वर्ष का होने पर पूरी तरह समर्थ हो जाता है। इस पर भरपूर निबोली आने लगती है तथा इसकी निबोली का व्यावसायिक लाभ उठाया जा सकता है। तेल, खली एवं सत तीनों ही विविध कामों में आने से इसके अपने सफल व्यावसायिक लाभ हैं। अत: नीम को फसल के रूप में यदि काम में लाया जाए तो वर्ष में पर्याप्त आय हो सकती है। लेकिन नीम के प्रति जहां हमारा रवैया उपेक्षापूर्ण है, वहीं सरकारी उदासीनता भी है। वैसे यह वृक्ष जल्दी बढ़ता है तथा उष्ण प्रदेश में आसानी से लगाया जा सकता है। अभी जो प्रयोग हुए हैं उनमें पीलिया रोग में भी इसका प्रयोग किया जा चुका है। यह बड़ा उपयोगी वृक्ष है। इसका रोपण प्रचुरता से किए जाने के सघन अभियान सरकारी स्तर पर चलाये जाने की आवश्यकता है। नीम पर्यावरण को शुद्ध बनाता है तथा प्रदूषण नाशक है। वनों की अंधाधुंध कटाई, ईंधन की जरूरतों तथा अन्य लकड़ी से बनने

शेष पृष्ठ 40 पर

भारतीय कृषि और डुंकेल प्रस्ताव

ओ.पी.शर्मा

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में व्यापार की शर्तों का काफी महत्व है। व्यापार की शर्त उन राष्ट्रों के लिए अनुकूल होती है जो पूंजीगत वस्तुओं का निर्यात एवं उपभोग वस्तुओं का आयात करते हैं। विश्व के प्राय: सभी विकासशील मुल्क निर्यातित आय के लिए उपभोग वस्तुओं के निर्यात पर निर्भर हैं और इनमें भी खाने पीने की वस्तुओं जैसी परम्परागत निर्यातों की बाहुल्यता रहती है। स्वाभाविक है कि भारत सरीखे कई विकासशील राष्ट्रों को निर्यातित आय में बड़ी भारी हानि उठानी पड़ती है। ये राष्ट्र इस स्थिति में नहीं होते कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में विकसित राष्ट्रों से प्रतिस्पर्धा कर सकें। विकासशील राष्ट्रों के पास प्राकृतिक संसाधनों का अभाव नही है किंतु अपेक्षित वितीय संसाधनों का अभाव प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन में मुख्य बाधा है, फिर वे राष्ट्र अधुनातन टेक्नोलॉजी के अभाव में उपलब्ध संसाधनों का मनमाफिक दोहन नहीं कर पाते, इसके लिए इन राष्ट्रों को, विकसित राष्ट्रों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की ओर सतत मुखातिब रहना पड़ता है।

कृषि पिछड़ी हुई स्थिति में

हाल ही के वर्षों में भारत ने कृषिगत क्षेत्र में काफी सफलता अर्जित की है किंतु यहां की कृषि अनेक विकसित देशों की भांति औद्योगिक विकास का आधार नहीं बन सकी। कई विकसित राष्ट्रों ने सर्वप्रथम कृषि का विकास किया। तदुपरांत कृषि ने औद्योगिक विकास में प्रभावी भूमिका निभाई। भारत में कृषि द्वारा इस तरह की भूमिका नहीं निभा पाने का मुख्य कारण यहां की कृषि का अन्य राष्ट्रों की तुलना में काफी पिछड़ा हुआ होना है। आज भारत ने भले ही खाद्यान्न उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली हो, किंतु बदलते आर्थिक परिवेश के मुताबिक कृषि का समुचित विकास अभी नहीं हुआ है।

कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में जब कृषि ही पिछड़ी हुई अवस्था में हो तब इसके औद्योगिक विकास का आधार बनने की बात कैसे की जा सकती है। आर्थिक नियोजन के चार दशक उपरान्त भी कृषि का समस्याग्रस्त होना एक चिंतनीय पहलू है। ग्रामीण परिवेश में जो समस्याएं पहले थीं, वे आज भी देखने को मिलती हैं। प्राकृतिक आपदाओं के कारण कृषि उत्पादन में भारी उतार-चढ़ाव है। सिंचित क्षेत्र कृषिगत जरूरतों के अनुरूप नहीं है। साहूकारों के चंगुल से किसान ही नहीं उसकी संतान भी मुश्किल से ही निजात पा सकेगी। पिछले कुछ वर्षों में देश के बड़े किसानों की आय में बेतहाशा वृद्धि हुई है। इससे ग्रामीण परिवेश में "आर्थिक विषमता" की समस्या उठ खड़ी हुई है।

डुंकेल प्रस्ताव

ऐसी स्थिति में आज अन्तर्राष्ट्रीय परिवेश में डुंकेल प्रस्ताव चर्चित विषय बना हुआ है। डुंकेल प्रस्तावों का मसौदा जनरल एग्रीमेंट आन टैरिफ एंड ट्रेड (गैट) के महानिदेशक आर्थर डुंकेल ने तैयार किये हैं। दिसम्बर, 1991 में तैयार इस दस्तावेज में शुल्क, गैर शुल्क, कृषि, बहुराष्ट्रीय व्यापार समझौते, सेवा क्षेत्र के व्यापार, बौद्धिक सम्पदा अधिकार आदि निर्णयों को सम्मिलित किया गया। इस प्रस्ताव का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू निजी पेटेंट कानून को समाप्त करना है। आर्थर डुंकेल ने सभी प्राकृतिक संसाधनों को संपूर्ण मानव जाति की सम्पत्ति माना है। प्रस्ताव में व्यक्ति की बौद्धिक उपलब्धि को उसकी वैयक्तिक संपत्ति मानते हुए तथा उसके अधिकार को संरक्षित रखते हुए बीस वर्ष तक पेटेंट देने की बात मुख्य है। प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने से जानवर तथा पेड़-पौधे के जीवन रक्षक उत्पाद पेटेंट के दायरे में आने से संपूर्ण कृषि पर विकसित देशों तथा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का नियंत्रण हो जाएगा।

भारत द्वारा डुंकेल प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने पर कृषि से संबंधित सारगर्भित निर्णय यथा समर्थन मूल्यों की घोषणा, सब्सिडी, सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदि सरकार द्वारा नहीं लिए जाकर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा लिए जाएंगे। किसानों को कृषि संबंधी तकनीक एवं उन्नत बीजों के लिए इन कम्पनियों की ओर मुखातिब होना पड़ेगा। डुंकेल प्रस्तावों के अनुसार किसान फसल से उन्नत बीज संचय करके नहीं रख सकते, उन्हें हर बार बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से बीज खरीदने होंगे। ये उन्नत किस्म के बीज बहुत मंहगे होंगे। साथ ही भारतीय किसानों को कीटनाशक, उर्वरक, कृषि यंत्र आदि भी ऊंची कीमतों पर खरीदने को बाध्य होना पड़ेगा। कृषि से संबंधित उन्नत तकनीक का लाभ भारत में केवल बड़े किसान ही उठा सकेंगे। छोटे और मझौले किसान

अपने सीमित संसाधनों के कारण लाभ उठाने की स्थिति में नहीं होंगे। भारत में कृषि जोत का आकार बहुत छोटा है। अधिकांश किसान सीमान्त कृषकों की श्रेणी में है। इन प्रस्तावों के कारण छोटे किसानों को अपनी कृषि भूमि बेचने को बाध्य होना पड़ेगा जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी के फैलने की समस्या भयावह हो जाएगी। आज भारत में लगभग चार करोड़ शिक्षित बेरोजगार हैं, इस शताब्दी के अंत तक यह संख्या दस करोड़ हो जाएगी। कृषि क्षेत्र में तो पहले से ही छिपी हुई बेरोजगारी की विकट समस्या है।

डुंकेल प्रस्ताव में उन्नत किस्म के बीजों पर विशेष बल है। नि.संदेह इनके द्वारा कृषिगत उत्पादन में अपरिमित वृद्धि कर, अल्प समय में ही कृषि को लाभप्रद व्यवसाय के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। गौरतलब है कि भारत में सफलता की ओर अग्रसर हरित क्रांति में उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग तीव्र गति से बढ़ा है, कृषिगत क्षेत्र में सजगता बढ़ी है, किसान स्वयं उन्नत तकनीक को आत्मसात करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं, वे टेक्नोलॉजी के लाभ को बखूबी समझने लगे हैं। फिर भारत कृषि अनुसंधान और आधुनिक कृषि तकनीक में विकसित देशों से पीछे नहीं है। हमारे देश में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के कृषि विशेषज्ञ हैं। ऐसी स्थिति में डुंकेल प्रस्ताव से जब तक कृषि में क्रान्तिकारी परिवर्तन एवं उसके सर्वव्यापक लाभ की संभावना न हो, प्रस्ताव को स्वीकृत करना अहितकर होगा।

यदि हम विस्तृत दृष्टि से देखें तो डुंकेल प्रस्ताव हरित क्रांति को और बेहतर तकनीक मुहैया कराने का स्रोत है, किंतु यहां हम विकासशील राष्ट्रों की परिस्थितियों को दरगुजर नहीं कर सकते जो विकसित राष्ट्रों के सर्वथा विपरीत होती है। विकसित राष्ट्रों की तकनीक को इन राष्ट्रों में हू-ब-हू लागू नहीं किया जा सकता। जहां तक अधुनातन तकनोलॉजी का सवाल है, चाहे इसका इस्तेमाल पूंजीगत वस्तु उत्पादन में हो या फिर उपभोग वस्तु उत्पादन में, आज के परिवर्तित आर्थिक परिदृश्य में इसकी बढ़ती उपादेयता को दरगुजर करना एक अविवेकपूर्ण निर्णय है।

वर्तमान में आर्थिक सुधारों के दायरे में कृषि को भी सम्मिलित किया जाना अत्यावश्यक है। ऐसा करने से समूचे कृषितंत्र में तीव्र आर्थिक प्रगति व चहूंओर खुशहाली का मार्ग प्रशस्त होगा। जैसा कि पूर्व में स्पष्ट किया जा चुका है कि भारत में उन्नत तकनीक को अपनाने से कृषि की दशा में क्रांतिकारी सुधार हुआ है तो बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की नवीनतम तकनीक को आत्मसात करने में कतई संकोच नहीं करना चाहिए। टेकनोलॉजी के क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का कोई सानी नहीं, इनकी मदद से हम बेहतर किस्म का उत्पाद करते हैं और बदले में थोड़ा लाभ स्वदेश ले जाती है, यह लाजिमी भी है, तो हमें अनावश्यक रूप से आर्थिक गुलामी का ढिंढोरा नहीं पीटना चाहिए। हम यह नहीं कहते कि ये कम्पनियां विकासशील राष्ट्रों का शोषण नहीं करतीं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां विकसित राष्ट्रों की देन है। ये कम्पनियां विकासशील राष्ट्रों में समझौते के समय आकर्षक शर्तों के साथ प्रवेश कर जाती हैं, अपना बाजार बनाने के पश्चात वायदों से मुकर जाती है। विकासशील राष्ट्र उन्नत तकनीक से विमुख बने रहते हैं। अत: इनसे समझौता करते समय राष्ट्रहित की अनदेखी न हो, इस बात को ध्यान में रखने की महती आवश्यकता है।

भारत में डुंकेल प्रस्ताव लागू करते समय हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि अब तक हमारे देश में कृषि क्षेत्र में हुई प्रगति प्रभावित न हो। प्रस्ताव की कठोर शर्त जैसे समर्थन मूल्य की घोषणा, सब्सिडी, सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदि को जहां तक संभव हो स्वीकार नहीं करना चाहिए। देश में गरीबों की संख्या को देखते हुए इनकी उपादेयता अन्तर्निहित है। वैसे भी भारत सरकार सब्सिडी के असहनीय भार को कम करने के लिए उत्सुक है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा पूंजी निवेश, तकनीकी ज्ञान, मुनाफे, को स्वदेश ले जाने से संबंधित अधिकार भारत सरकार को अपने पास सुरक्षित रखने चाहिए। साथ ही नवीन तकनीक के अपनाने से लघु या मझौले कृषकों को होने वाली हानि की क्षतिपूर्ति की मुकम्मल व्यवस्था होनी चाहिए।

डुंकेल प्रस्ताव की जो शर्त भारत के हितों के विपरीत है, उन्हें विकासशील राष्ट्रों के सहयोग से भारत को अपने प्रभाव का इस्तेमाल कर संशोधित कराने का प्रयास करना चाहिए। भारत विश्व का एक विस्तृत बाजार है, यहां प्राकृतिक व मानवीय संसाधनों की प्रचुरता है, किसी देश द्वारा भारत की उपेक्षा मुमकिन नहीं। विदित है भारत ने 2 जुलाई, 1989 को गैट में डुंकेल प्रस्ताव पर संशोधित प्रस्ताव रखे जिनकी विकासशील राष्ट्रों ने प्रशंसा की, वहीं विकसित देशों ने हाय-तौबा मचायी। भारत के आर्थिक सुधारों की श्रृंखला में निर्णय बाह्य शक्तियों के दबाव में न होकर स्वविवेक तथा राष्ट्रहित से ओत-प्रोत होने चाहिए।

प्राध्यापक, स्नातकोत्तर आर्थिक प्रशासन एवं वित्तीय प्रबंध विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, करौली, राजस्थान

महिला बचत समूह संवार रहे है आदिवासियों के जीवन को

✍ अशोक कुमार यादव

थोड़ा-थोड़ा धन इकट्ठा करके अर्थात आय में से अल्प बचत कर हम अपनी गरीबी को समृद्धि में बदल सकते है। यदि इस अल्प बचत को महिलाएं अपना लें तो मान लीजिए कि पूरा घर और समाज उनसे प्रेरणा लेकर इस छोटी बचत को बड़ा करके उससे अपनी भावी जरूरतों की पूर्ति कर सकता है।

ऐसा ही कमाल कर दिखाया है राजस्थान के आदिवासी जन संख्या बहुल डुंगरपुर जिले के बिछीवाड़ा पंचायत समिति क्षेत्र की आदिवासी महिलाओं ने। अल्प बचत से आर्थिक स्थिति सुधारने का राज इन महिलाओं को बताया माडा गांव में कार्यरत ''जनशिक्षा एवं विकास संगठन'' नाम की स्वयं सेवी संस्था ने। पिछले पांच वर्षों में बिछीवाड़ा पंचायत समिति क्षेत्र में इस संस्था ने मजदूर, खेतिहर, आदिवासी महिलाओं के 44 महिला बचत समूह गठित कराये हैं। इन समूहों से कोई साढ़े तीन हजार महिलाएं सदस्य के रूप में जुड़ी हुई हैं। इनमें से 95 प्रतिशत सदस्य आदिवासी महिलाएं हैं। धीरे-धीरे इन समूहों की महिलाओं ने 6 लाख रुपये से अधिक धन राशि अपने निकटतम डाकघरों में अथवा बैंकों में जमा करा दी है।

अब देखिए कि खेतों में काम करने वाली मजदूर, आदिवासी महिलाओं को प्रेरणा मिली तो उन्होंने अपनी आय में से थोड़ी-थोड़ी बचत की और उसे प्रतिमाह बैंक या डाक घर में जमा कराती हैं। बचत करने के फायदे मिले तो इन महिलाओं में बचत की ऐसी प्रवृत्ति विकसित हुई है कि वे अधिकाधिक राशि की बचत करने लगी हैं।

जन शिक्षा एवं विकास संगठन ने इन महिला समूहों की महिलाओं से बचत कराने का नायाब तरीका निकाला है। प्रत्येक माह एक निश्चित तारीख को महिला समूह की सदस्यों की बैठक आयोजित होती है। इसमें महिलाएं अपनी महीने भर की बचत को लाती हैं और इस बचत की राशि को महिला समूह के सामूहिक कोष में जमा कराती हैं। संस्था ने इन महिलाओं को पास बुक दिलवा रखी है जिनमें जमा कराई गयी राशि का इन्द्राज किया जाता है। इस सामूहिक कोष का खाता समीपस्थ बैंक या डाकघर में खुला हुआ है। बैठक में एकत्रित धन राशि को इस सामूहिक कोष के खाते में जमा करा दिया जाता है। इस महिला बचत समूह के खाते में से धन राशि समूह महिला सदस्यों की राय से अधिकृत तीन महिला सदस्यों के दस्तखतों से ही निकाली जा सकती है।

महिला बचत समूहों की सदस्यों को इस तरह के सामूहिक कोष से जहां अपने जरूरत के कामों को पूरा करने के लिए बिना ब्याज के धन राशि उधार दी जाती है वहीं दिन प्रतिदिन आने वाली उनकी आर्थिक कठिनाइयों को इस सामूहिक कोष के माध्यम से सुलझाया जाता है। इन महिला बचत समूहों की बदौलत अनेक महिलाओं ने रहन रखे हुए अपने जेवर इत्यादि को छुड़वाया है और कठिनाई में इनको खाद, बीज, बीमारी, बच्चों की फीस, किताबों के लिए धनराशि मिली है। ये महिला बचत समूह शादी, ब्याह, मृत्यु भोज अथवा अन्य सामाजिक संस्कारों व रीति रिवाजों के लिए अपनी सदस्यों को धन उपलब्ध नहीं कराते।

बिछीवाड़ा पंचायत समिति के साबली गांव में पिछले चार वर्षों से कार्यरत महिला बचत समूह की सदस्यों से बातचीत हुई तो ये महिलाएं उत्साहपूर्वक अपने बचत समूह के कार्यकलापों की जानकारी देने लगीं। समूह की नेता 45 वर्षीया गोपीबेन जोशी कहने लगी कि उनके समूह की 35 महिलाएं सदस्य हैं और प्रत्येक सदस्य महिला बचत समूह की सामूहिक कोष में प्रति माह दस-दस रुपये बचत जमा कराती है। समूह की मासिक बैठक में लिए गए निर्णय के अनुसार संग्रहित 10 हजार रुपये का तो साबली के ग्रामीण बैंक में ''फिक्सड डिपोजिट'' खाता खुलवा दिया गया है। समूह का एक खाता साबजी के डाकघर में है जिसमें 4 हजार 600 रुपये जमा हैं। समूह की अधिकांश सदस्य महिलाएं आदिवासी हैं। ज्यादातर पुरुष आदिवासियों के रोजगार के लिए गुजरात चले जाने के कारण इन महिलाओं को ही घर की सारी जिम्मेदारी सम्हालनी पड़ती है। वे खेतों में फसलें उगाती हैं, सब्जियों का उत्पादन करती हैं और खाली समय में मजदूरी करके अपना तथा बच्चों का पेट पालती हैं। महिला बचत समूह अपनी

सदस्यों की कठिनाइयों में मदद करता है और उनको धन उपलब्ध कराके खेतों में पैदावार लेने में सहायता करता है।

साबली के महिला बचत समूह से जुड़ी आदिवासी महिला शांता ने बताया कि उसके जेवर दो-तीन साल से बनिये के यहां गिरवी पड़े थे। वह बचत समूह से जुड़ी और प्रति माह सामूहिक कोष में धन राशि जमा कराई तो उसे समूह ने इन जेवरों को छुड़ाने के लिए 500 रुपये की राशि दी। उसके घर में अब चांदी के जेवर हैं। धावरी ने खेत में फसल बोने के लिए कलाल के यहां अपनी हांसली गिरवी रखी थी पर बचत समूह की मेहरबानी से उसने 6 माह बाद ही इसे छुड़ा लिया। इसी तरह से नानी नाम की महिला ने बचत समूह से डेढ़ हजार रुपये का धन उधार लेकर सारे जेवर कलाल के यहां से छुड़ा लिए हैं। नानी ने इसके बाद तो लड़के का ब्याह भी करा दिया। उसके जेवर गिरवी रखे थे सो इस कारण उसके परिवार पर कलाल का काला साया था। इसी चक्कर में उसके बैल तथा बकरी भी चले गये पर अब वह खेत में सब्जी बोकर व फसलों की पैदावार लेकर कमा रही है और बचत समूह से उसने खेत में अदरक व रतालू बोने के लिए भी बारह सौ रुपये लिए थे। इसी प्रकार से हंसी गरासियां, पन्नी, हकरी जैसी महिलाओं ने भी बचत समूह से जुड़कर अपनी आर्थिक कठिनाइयों से मुक्ति पायी है। धावरी ने बताया कि उनके समूह की मणी बाई ने तो अपनी बहू के इलाज के लिए समूह से राशि उधार ली। मंगला जो कई वर्षों से पथरी रोग से पीड़ित था उसका इलाज भी हो गया व उसका पथरी रोग खत्म हो गया है। मंगला की पत्नी को बचत समूह ने 800 रुपये दिए जिससे उसका समय पर इलाज हो गया वर्ना वह थोड़े ही दिन का मेहमान था। बचत की आदत ने इस समूह की चार सदस्यों के गिरवी पड़े सोने के बोर भी छुड़वा दिए हैं।

समूह की नेता गोपी बेन जोशी ने बताया कि महिला बचत समूह के कोष ने सदस्य महिलाओं में उत्साह तथा आत्म निर्भरता का संचार किया है। यही कारण है कि उनके समूह में सदस्य महिलाओं की संख्या पिछले वर्षों में दस से 35 हो गयी है। गांव की अन्य महिलाएं भी इस समूह की ओर आकर्षित हो रही हैं। यद्यपि आरंभ में महिलाओं को उनकी बात पर विश्वास नहीं हुआ पर बचत समूह से फायदा मिलने लगा तो धीरे-धीरे इतनी महिलाएं सदस्य बन गयीं। अब इस समूह से जुड़ी महिलाएं समूह को छोड़ना भी नहीं चाहतीं। यहां तक कि अब सदस्य महिलाओं के घरों में अल्प बचत की प्रवृत्ति विकसित हो गयी है।

जन शिक्षा एवं विकास संगठन ने बिछीवाड़ा पंचायत समिति क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने एवं उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने हेतु समूहों की महिलाओं से फल एवं सब्जी उत्पादन का कार्यक्रम भी शुरू कराया है। इसमें संस्था द्वारा महिलाओं को विभिन्न फलों के पौधे तथा सब्जियों के बीज उपलब्ध कराये जाते हैं। इनको महिलाएं अपनी निजी जमीन में उगाकर उनके उत्पादन को बाजार में बेचने लगी हैं। इस प्रवृत्ति से उनको आर्थिक सम्बल के साथ-साथ अपने परिवार के लिए हरी सब्जियां उपलब्ध हुई हैं। यही नहीं बचत समूहों की महिलाओं से पौधशाला तैयार कराने के कार्य भी कराये जा रहे हैं जिससे उनमें वृक्षों के प्रति लगाव पैदा हुआ है।

जन शिक्षा एवं विकास संगठन के निदेशक, श्री देवीलाल व्यास ने बताया कि महिला बचत समूहों के गठन का कार्य बिछीवाड़ा पंचायत समिति क्षेत्र में वर्ष 1988 से आरंभ कराया गया था। आज इस क्षेत्र में जो 44 महिला बचत समूह कार्य कर रहे हैं उनमें प्रत्येक से 30 से 45 तक महिलाएं जुड़ी हुई हैं और ये पूर्णतया अपने गांवों पर ही निर्भर हैं। महिला जागृति के इस अनुष्ठान की बदौलत महिलाओं ने एक लाख रुपये के तो इन्दिरा किसान विकास पत्र खरीद रखे हैं।

श्री व्यास का कहना है कि महिला बचत समूहों के पास धीरे-धीरे अब अच्छी खासी रकम जमा हो गयी है और उनके सामूहिक कोष इनकी जरूरतों की पूर्ति कर इन्हें समृद्धि की ओर बढ़ा रहे हैं। संगठन इन महिला समूहों का रजिस्ट्रेशन करा रहा है। जन शिक्षा एवं विकास संगठन अब इन बचत समूहों से जुड़ी महिलाओं का फेडरेशन गठित करने व महिला बैंक बनाने की ओर आगे बढ़ रहा है।

सचमुच बिछीवाड़ा पंचायत समिति क्षेत्र की आदिवासी महिलाओं में बचत समूहों के कारण एक नई जागृति आयी है। इनको अब अपनी जरूरतों की पूर्ति के लिए न तो बनियों व कलालों की तरफ मुंह ताकना पड़ता है और ऐसा मौसम नहीं कि जब उन्होंने अपने खेतों में फसल व सब्जियों की पैदावार नहीं ली हो। ये बचत समूह महिलाओं के माध्यम से क्षेत्र के आदिवासियों के जीवन को संवार रहे हैं और उनकी तकदीर को बदल रहे हैं। जन शिक्षा विकास संगठन ने अपने इस अनूठे प्रयोग में भरपूर सफलता प्राप्त की है।

जिला सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी
डूंगरपुर (राज.) 314001

बायोगैस : राष्ट्र की अमूल्य निधि

✍ डा0 हिमांशु शेखर एवं डा0 अजय श्रीवास्तव

ऊर्जा संकट के वर्तमान समय में इसके नवीकरणीय स्रोतों पर जोर दिया जा रहा है क्योंकि परम्परागत संसाधन यथा कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस का उपयोग दीर्घकाल से हो रहा है। अतएव इसके संसाधन सीमित हैं एवम् पुर्नप्रयोग भी हम नहीं कर सकते हैं। अनुमानतः पेट्रोलियम के स्रोत केवल 2050 ई0 तक के लिए ही पर्याप्त हैं जबकि सूर्य, पवन एवम् समुद्री जल ऊर्जा के अनन्त संसाधन हैं। इसके अतिरिक्त बायोगैस, भू-तापीय ऊर्जा, कूड़े-कचरे से ऊर्जा उत्पादन की नवीन विधियां भी प्रकाश में आयी हैं। ऊर्जा की कमी के कारण ही घरेलू उपभोक्ताओं को ही नहीं वरन् अनेकों लघु व भारी उद्योगों को पर्याप्त विद्युत नहीं प्राप्त हो पा रही है। यद्यपि आजादी के बाद से सामूहिक प्रयासों के परिणामस्वरूप ऊर्जा के उत्पादन में बढ़ोत्तरी हुई है, फिर भी मांग के अनुरूप यह पर्याप्त नहीं है। आठवीं योजना (1990-95) के दौरान राष्ट्र की ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 1,70,000 करोड़ रुपयों की जरूरत होगी। अकेले विद्युत क्षेत्र में ही 1,26,962 करोड़ रुपये के निवेश की आवश्यकता होगी जिससे 36,645 मेगावाट की अतिरिक्त उत्पादन क्षमता स्थापित की जा सके। मगर संसाधनों की कमी के संकट को देखते हुए इसकी निकट भविष्य में सम्भावना नहीं दिखती।

लेकिन करोड़ों रुपये के निवेश के बावजूद जल, ताप व आणविक विद्युत गृहों के हमारे पर्यावरण, परिवेश एवम् प्राकृतिक वातावरण को बुरी तरह प्रदूषित कर रखा है। जीवाश्म ईंधनों के व्यापक दोहन से हमने औद्योगिक क्षेत्र में विकास के नये आयाम तो स्थापित किए हैं परन्तु इसकी कीमत हमें चुकानी पड़ी है। वायुमण्डल में कार्बन मोनोक्साइड की बढ़ती मात्रा इन ईंधनों के प्रज्वलन के कारण ही है। वैज्ञानिक समुदाय ही नहीं वरन् आम आदमी भी इन्हीं कारणों से ऊर्जा के नवीकरणीय (गैर पारंपरिक) स्रोतों की ओर आकृष्ट हुआ है। क्योंकि बढ़ती हुई जनसंख्या की मांग को पूरा कर सकने में गैर पारम्परिक ऊर्जा स्रोत ही सक्षम हैं। इन क्षेत्रों के विकास से हम पर्यावरणीय प्रदूषण के घातक प्रभाव से बचे रह सकते हैं। वायु और जल प्रदूषण, अम्लीय वर्षा, ओजोन छतरी को हुई क्षति, तेल का रिसाव, ग्रीन हाऊस प्रभाव आदि जीवाश्म ईंधनों के विकास व प्रज्वलन से संबंधित हैं। हालांकि कुल ऊर्जा का 40 प्रतिशत भाग ही हम गैर पारम्परिक स्रोतों से प्राप्त कर रहे हैं।

गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोतों के विकास हेतु गठित आयोग में पर्यावरण को क्षति न पहुंचाने वाले ऊर्जा स्रोतों के संदर्भ में कार्ययोजना तैयार की है जो आगामी 5 वर्षों के लिए होगी। जिसके फलस्वरूप हम 2000 करोड़ रुपये के निवेश से कोयले के 250 मिलियन टन के सदृश ऊर्जा व 15000 मेगावाट विद्युतीय ऊर्जा उत्पन्न कर सकेंगे। यह ऊर्जा ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकता को ही पूरा नहीं करेगी वरन् जंगलों के कटाव को भी रोकेगी। ग्रामीण जन-जीवन की वर्तमान स्थिति में भी सुधार होगा। नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों से हमारे पर्यावरण को कोई क्षति नहीं पहुंचेगी। इन ऊर्जा संयंत्रों से कम लागत पर अपेक्षाकृत त्वरित ऊर्जा प्राप्त कर सकते हैं। लागत खर्च भी कम होता है साथ ही अतिरिक्त निवेश की भी आवश्यकता नहीं होती है। जैसा कि ताप विद्युतगृहों में होता है।

बायोगैस का उत्पादन

जटिल कार्बनिक योगिकों के अवायवीय किण्वन (Anaerobic feremantation) से प्राप्त बायोगैस ऊर्जा का सबसे अच्छा विकल्प हो सकता है। इसमें मिथेन गैस की प्रचुरता होती है। उष्णकटिबंधीय और उपोष्ण क्षेत्रों में सूर्य की किरणों व बायोमास की अधिकता से सेलूलोसी कार्बनिक उच्छिष्ट पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। उल्लेख्य हो कि यही भौगोलिक स्थिति हमारे देश में भी है। बायोगैस संयंत्र से निकला पाचित पिच्छिल (digested slurry) व आपंक (Sludge) कार्बनिक खाद के रूप में उपयोग में ला सकते हैं जो नाइट्रोजनयुक्त होता है। इसमें अच्छे पोषण गुण और मृदा को उर्वरक बनाने के गुण विद्यमान रहते हैं जो कि अन्य रासायनिक खादों में नहीं मिलते हैं। हमारे देश में लगभग 6 लाख संयंत्र स्थापित किए जा चुके हैं। जिसमें से अधिकांश में पशु मल भरण (Cattle Dung Feed) का प्रयोग होता है। इस बायोगैस को भोजन बनाने के कार्यों एवम् विद्युत उत्पन्न करने के लिए उपयोग में लाते हैं। बायोगैस उत्पादन की प्रक्रिया में अन्य बेकार की वस्तुओं का उपयोग हो रहा है जिससे ऊर्जा उत्पादन व खाद का उपयोग दोनों हो रहा है। इसके कारण ही कूड़े-कचरे के निस्तारण की समस्या का निदान भी हो रहा है।

यद्यपि हमारे देश में बायोगैस संयंत्र में मानव-मल का

अनुप्रयोग शायद ही हुआ है। हालांकि महाराष्ट्र गांधी स्मारक निधि, पुणे के द्वारा इस दिशा में कुछ प्रयोग किए गए है। राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिकी शोध संस्थान, नागपुर ने केन्द्रीय कारावास, नागपुर में मानवमल पर आधारित बायोगैस संयंत्र की स्थापना की। इसी प्रकार के संयंत्र हरिजन कालोनी, मिदनापुर (प0 बंगाल) एवं एक्शन फार फुड प्रोडक्शन (एप्रो) के द्वारा पुरी (उड़ीसा) में स्थापित किए गये हैं। सार्वजनिक शौचगृहों के मानव मल से चलने वाले बायोगैस संयंत्र को प्रथम बार सुलभ इंटरनेशनल, पटना द्वारा स्थापित किया गया था। यह पाचक (Digester) पिछले नौ वर्षों से कार्य कर रहा है और इस दिशा में किये गए प्रयास अत्यन्त सफल रहे हैं। भारत में बायोगैस उत्पादन की दिशा में कुछ कार्य किए गए हैं, जिसमें से कुछ तो अभिकल्प अभिमुखता (Design aspects) पर है। फिर भी इस जीवन्त क्षेत्र में अभी भी शोध व विकास की पूरी सम्भावना है।

बायोगैस संयंत्रों की स्थापना से लाभ

ओपेक राष्ट्रों से तेल के आयात के कारण हमारे देश की जर्जर होती अर्थव्यवस्था की स्थिति वर्तमान में कुछ वैसी ही हो गयी है जैसे कोढ़ में खाज। खाड़ी युद्ध के समय हम सभी पेट्रोलियम उत्पाद एवम् ऊर्जा-संकट से रुबरू हो चुके हैं। अत: नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की ओर ध्यान जाना स्वाभाविक है। इन्हें अब दीर्घ-स्थायी (यानि सतत् साधन) माना जा रहा है। बायोगैस, जो जैव ऊर्जा का महत्वपूर्ण रूप है, की प्रचुरता हमारे राष्ट्र के वर्तमान ऊर्जा-संकट को हल कर सकने में समर्थ है। आयोग ने 1.2करोड़ बायोगैस संयंत्रों की स्थापना की बात की, ताकि ग्रामीण आबादी का 10प्रतिशत भाग इससे लाभान्वित हो सके। इसके अतिरिक्त आयोग ने 10 करोड़ समुन्नत चूल्हा निर्माण व सीवेज उपचार संयंत्रों की स्थापना का प्रस्ताव भी रखा है, जिनकी गैस से विद्युत उत्पन्न की जा सके।

ग्रामीण परिक्षेत्रों में बायोमास से ऊर्जा उत्पादन की प्रक्रिया सुगम है और साथ ही सर्वत्र उपलब्ध भी। उन ग्रामीण क्षेत्रों में, जहां सामुदायिक बायोगैस संयत्र की स्थापना हुई है, महिलाओं को अनेक कष्ट उठाकर मीलों दूर जंगल से लकड़ी काटने की दिनचर्या से मुक्ति तो मिली ही है, साथ ही उनका स्वास्थ्य भी धुआंरहित चूल्हे के कारण समुन्नत हुआ है।

ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक भावना का जनसंचार भी हुआ है। अध्ययनों से यह पता लगा है कि रासायनिक उर्वरक संयत्रों के अपेक्षाकृत बायोगैस संयत्रों में लगा निवेश अधिक लाभप्रद होता है। गैर-पारम्परिक ऊर्जा स्रोत विभाग ने यह पाया कि कोयले पर आधारित वृहद् आकार के रासायनिक उर्वरक संयंत्र में खर्च 300 करोड़ रुपये का होता है जो 100 करोड़ रुपये के तुल्य विदेशी मुद्रा के अतिरिक्त है। इस संयंत्र से 35 मेगावाट ऊर्जा की खपत होती है और मात्र 1000 व्यक्तियों को ही रोजगार प्रदान किया जा सकता है, जबकि समाज क्षमता वाले बायोगैस संयत्र में 271.5 करोड़ रुपये के निवेश की आवश्यकता होती है और इसमें विदेशी निवेश की कोई आवश्यकता नहीं। लगभग 26,150 संयत्रों के स्थापना के द्वारा न केवल 63,500 मेगावाट हर्ट्ज (MWH) विद्युत का उत्पादन होगा वरन् 1 लाख रोजगार भी सृजित हो सकेगें। यहां विचारणीय तथ्य यह है कि कोयले पर आधारित उर्वरक संयंत्रों से उत्पन्न रोजगार के अवसर केवल क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रहते हैं जबकि बायोगैस संयंत्रों के स्थापना के द्वारा अनेक ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उत्पन्न होता है।

एक आकलन के अनुसार प्राकृतिक गैस पर आधारित संयंत्रों, जिसमें 917 करोड़ रुपये की लागत खर्च आयेगी एवम् जिसमें से 300 करोड़ रुपये विदेशी मुद्रा होगी, की स्थापना के द्वारा 14 लाख टन प्रतिवर्ष पोषक (Nuteient) उत्पन्न कर सकेंगे। इस संयंत्र में 90 मेगावाट विद्युत का खर्च होगा। इन सबके बाद रोजगार मात्र 5,000 व्यक्तियों को ही मिल सकेगा। परन्तु इतने ही निवेश के फलस्वरूप कोई 15 लाख परिवार हेतु बायोगैस संयंत्र की स्थापना हो सकती है। इसमें विदेशी मुद्रा खर्च की समस्या भी नहीं है। इन संयंत्रों के द्वारा 14 लाख टन यूरिया के समतुल्य पोषणमान वाला कार्बनिक खाद पैदा हो सकेगा। इसमें वनस्पति व कृषि अवशेष एवं गोबर खाद आदि का ही उपयोग होगा। सर्वाधिक तथ्य तो यह है कि इस निवेश के द्वारा हजारों गाँवों में 3.73 लाख रोजगार सृजित होंगे एवं 20 लाख मेगावाट हर्ट्ज विद्युत शक्ति भी उत्पन्न होगी। अतिरिक्त ऊर्जा-स्रोत आयोग द्वारा संचारित मानव मल पर आधारित सामूहिक बायोगैस संयंत्र (मसूदपूर, नई दिल्ली में स्थापित) के आधार पर यह आकलन किया गया कि 1 लीटर मिट्टी के तेल द्वारा प्राप्त ऊर्जा 25 व्यक्तियों के मल से प्राप्त ऊर्जा के समतुल्य है।

लागत-लाभ का विश्लेषण करने के बाद यह पाया गया कि बायोगैस द्वारा प्राप्त ऊर्जा डीजल से प्राप्त ऊर्जा से 24प्रतिशत सस्ती है। बायोगैस द्वारा 5 हार्सपावर को चालित करने के लिए 30प्रतिशत डीजल की भी आवश्यकता होती है, फिर तो आज बढ़ी हुई मूल्य के डीजल पर बायोगैस से प्राप्त ऊर्जा 27 प्रतिशत से भी अधिक सस्ती साबित होगी।

हमारे पर्यावरण के प्रति अहानिकारक पद्धति :

मल-जल के अपर्याप्त निस्तारण के फलस्वरूप जलवाहित

एवम् उत्सर्ग (Excreta) सम्बन्धित रोग, रोगजनक जीवाणु (Pathogenic Bacteria), परजीवी अंडाणु (Parasitic ova) एवम् हानिकारक कार्बनिक रसायनों के कारण ही होते हैं। परिणामत: मानव स्वास्थ्य बुरी तरह से प्रभावित होता है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए जनस्वास्थ्य के लिए स्वच्छ पर्यावरण के विकास हेतु मल व उच्छिष्ट पदार्थों का विधिपूर्वक संग्रह एवं इसके बाद निस्तारण अति आवश्यक है। बायोगैस संयंत्र में अवायवीय पाचन (Anaerobic Digeation) के कारण ही हानिकारक व विषाक्त, रोगजनक व कार्बनिक प्रदूषण पदार्थ कम हो जाते हैं तथा मल व गन्दगी से उत्पन्न रोग कम होते हैं। इस पद्धति को जन स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त पाया गया है।

बायोगैस की अपेक्षा ऊर्जा के परम्परागत स्रोत यथा जलावनी लकड़ी, गोबर के कंडे आदि अस्वास्थकारक, आर्थिक दृष्टिकोण से अलाभप्रद और समय की बर्बादी वाले ही हैं। इससे आंख व फेफड़े के रोग, कैंसर आदि उत्पन्न हो जाते है। क्योंकि धूम में बेंजों-ए-पायरीन उपस्थित होते हैं जबकि बायोगैस धूमरहित ईंधन है। यह पद्धति वातावरण को संरक्षित रखती है और इसकी प्रज्जवलन क्षमता अन्य परम्परागत ईंधनों से लगभग 5 गुना अधिक है।

स्पष्टत: बायोगैस ऊर्जा उत्पादन की सर्वाधिक उपयुक्त पद्धति है जिससे न केवल कम लागत पर ऊर्जा प्राप्त होती है और नाइट्रोजन युक्त उर्वरक प्राप्त होता है वरन् हमारा पर्यावरण भी अप्रदूषित बना रहता है। यह ऊर्जा स्रोत निश्चित ही ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के जीवन-स्तर में सुधार कर सामाजिक परिवर्तन कर सकने में समर्थ हैं और तो और हमारे राष्ट्र की भौगोलिक परिस्थितियों के अनुकूल हैं। अत: योजनाकारों को ऊर्जा-विकास की योजनाओं में इसे समुचित स्थान प्रदान करना चाहिए।

221, डालमिया छात्रावास
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी - 221 005

पृष्ठ 3 का शेष

अभी लाखों ग्राम ऐसे हैं जो सड़कों से जुड़े नहीं हैं। एक तो इनकी आबादी कम है और दूसरे इन गांवों में विशेष कृषि उपज नहीं होती। इस तरह गांवों के वयस्क स्त्री पुरुष शहरों में मजदूरी करके अपना जीवनयापन करते हैं। वे साल में कुछ दिनों के लिए अपने घर आते हैं। सड़कों के अभाव में इन गांवों में शायद ही विकास संबंधी कोई कार्य होता है। इस तरह के गांवों को सड़कों से जोड़ने के लिए अत्यधिक साधन चाहिए। जिला प्रशासन साधनों के अभाव में ऐसे गांवों के लिए विशेष कुछ नहीं करता।

ग्रामीण सड़कों का निर्माण जिला परिषद, क्षेत्र विकास परिषद और गांव पंचायतों द्वारा किया जाता है। देश के कुल भागों में जहां विस्तृत वन हैं वन विभाग भी यह कार्य करता है। अब इधर कुछ समय से ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और कमान एरिया विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत भी शामिल सड़कों का निर्माण किया जा रहा है।

ग्रामीण भी अब इस बात को समझने लगे हैं कि गांव का पक्की सड़क से जुड़ना विकास की पहली शर्त है। सभी गांवों के निवासी अपने क्षेत्र के विकास में सड़कों की भूमिका को समझते हैं। अत: उन्होंने स्वैच्छिक श्रमदान, अंश दान और गांव सभा के बजट से सड़क निर्माण कराना शुरू किया है। लेकिन तकनीकी कुशलता और अनुभव की कमी इसमें आड़े आ रही है। कभी कभी उन खेतों के किसान जिन पर होकर सड़क गुजरती है सड़क निर्माण के लिए जमीन देने में आनाकानी करते हैं। इससे सड़क निर्माण में अनावश्यक विलम्ब होता है। इन सब कठिनाइयों के बावजूद प्रत्येक मौसम में गांवों तक पहुंचने वाली सड़कों के निर्माण में तेजी आई है। 1990-91 और 1991-92 में 93 हजार गांवों को हर मौसम में काम आने वाली सड़कों से जोड़ा गया है। ग्रामीण सड़कों का निर्माण अनेक एजेंसियों द्वारा किया जाता है। अत: उनके रख-रखाव, मरम्मत आदि की समेकित व्यवस्था नहीं है। अगर कुछ सड़कों की मरम्मत एक से अधिक संगठन करते हैं तो कुछ सड़कों की मरम्मत की कोई व्यवस्था नहीं है।

आठवीं योजना में ग्रामीण सड़कों के निर्माण में उन गांवों को प्राथमिकता दी जा रही है जिनकी जनसंख्या 1000 और उससे अधिक है। इसके अलावा पिछड़े और आदिवासी क्षेत्रों के गांवों में सड़क निर्माण की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। राज्य क्षेत्र में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत आने वाली सड़कों के 10,610 करोड़ रुपये के परिव्यय का प्रावधान है। आशा है आठवीं योजना के दौरान ग्रामीण सड़कों के निर्माण में उल्लेखनीय वृद्धि होगी और गांव पंचायतें इस कार्य में अधिक दिलचस्पी लेंगी।

22 मैत्री अपार्टमेंट्स
ए/3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-63

ग्रामीण कार्यक्रमों हेतु नई योजना

✍ डॉ0 अजय जोशी

ग्रामीण औद्योगीकरण ग्रामीण बेरोजगारी निवारण का महत्वपूर्ण साधन है। जिस तेजी से ग्रामीण बेरोजगारी बढ़ रही है उसे देखते हुए ग्रामीण क्षेत्र के दस्तकारों को अपनी कला के आधार पर विभिन्न वस्तुओं के निर्माण हेतु पर्याप्त सहायता देना आवश्यक है। ग्रामीण कारीगरों में कलात्मकता की कमी नही है। परन्तु आर्थिक अभावों के कारण उन्हें नये औजार आदि खरीदने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। सरकार विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत ग्रामीण कारीगरों को औजार, उपकरण आदि उपलब्ध कराने के लिए निरन्तर प्रयासरत है।

वर्ष 1992-93 के लिए ग्रामीण कारीगरों को आधुनिक औजारों की किट उपलब्ध कराने के लिए एक नई योजना तैयार की गई है। इस योजना का उद्देश्य कारीगरों को नये औजार उपलब्ध कराकर उनकी कार्यक्षमता तथा उत्पादकता में वृद्धि करना है। इस योजना के अन्तर्गत उन कारीगरों को लाभान्वित करने का प्रयास किया जाएगा जो गरीबी की रेखा से नीचे जीवन-यापन करते हों।

इस योजना के अन्तर्गत दिए जाने वाले आधुनिक औजारों की किट का औसत मूल्य 2 हजार रुपये रखा गया है। औजारों की कीमत का 10 प्रतिशत कारीगर को देना होगा। शेष केन्द्र सरकार अनुदान के रूप में देगी। इस प्रकार मात्र लगभग 200 रुपये में ग्रामीण कारीगरों को आधुनिक औजारों की किट उपलब्ध हो सकेगी। यह कार्य जिला ग्रामीण विकास एजेन्सियों तथा अन्य संस्थाओं जैसे जिला उद्योग केन्द्र, खादी और ग्रामोद्योग आयोग आदि संस्थाओं के माध्यम से किया जाएगा।

चालू वर्ष में यह योजना देश के 50 जिलों में लागू की जा रही है। इस योजना हेतु जिलों का चुनाव राज्य सरकारों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों पर प्रशासन पर छोड़ दिया गया है। इस वर्ष में इस योजना के अन्तर्गत एक लाख कारीगरों को लाभान्वित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। केन्द्र सरकार ने इस योजना पर 18 करोड़ रुपये खर्च करने की व्यवस्था की है।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंग के रूप में चलायी जाने वाली इस योजना के अंतर्गत बुनकर, दर्जी, बुनाई एवं बीड़ी कारीगरों को छोड़कर ग्रामीण क्षेत्रों के सभी दस्तकार/कारीगर जो गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे है, आते हैं। इस योजना के अन्तर्गत बढ़ई, लौहार, स्वर्णकार, मिट्टी के बर्तन, बनाने वाले, चमड़े का कार्य करने वाले शिल्पकार आदि लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

ग्रामीण गरीबी को देखते हुए ग्रामीण क्षेत्रों के कारीगरों व दस्तकारों को प्रोत्साहित करने तथा उनकी कला को जीवित करने के लिए यह योजना काफी महत्वपूर्ण है। इस योजना के अन्तर्गत कवरेज का क्षेत्र काफी सीमित है। पूरे देश की विशालता को देखते हुए केवल 50 जिलों का चयन काफी कम है। इससे ग्रामीण कारीगरों का एक बहुत छोटा वर्ग ही लाभान्वित हो पायेगा। यह योजना केवल गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले कारीगरों हेतु ही है जबकि गरीबी की रेखा से ऊपर जीवन यापन करने वाले योग्य व कुशल कारीगर भी आधुनिक औजार प्राप्त कर कार्य करने के पात्र नहीं हैं।

वास्तव में इस अच्छी योजना को पूरे देश के सभी जिलों में लागू करने की आवश्यकता है। गरीबी की रेखा से नीचे वाले कारीगरों को 90 प्रतिशत अनुदान दिया जाता है। इस योजना में गरीबी की रेखा से ऊपर वाले कारीगरों को भी लिया जाना चाहिए चाहे उनके लिए अनुदान 90 प्रतिशत न होकर 50-60 प्रतिशत ही क्यों न हो। यदि इस योजना का सही क्रियान्वयन होता है तो जहां एक ओर ग्रामीण बेरोजगारी कम हो सकेगी वहीं दूसरी ओर हमारी परम्परागत कलाओं का संरक्षण भी हो सकेगा। ग्रामीण कारीगरों को प्रोत्साहित करने से हमारे हस्तशिल्प उत्पादों का निर्यात बढ़ सकेगा जिससे विदेशी मुद्रा अर्जन में भी सहायता मिलेगी।

डी-423, मुरलीधर व्यास नगर
गजनेर रोड, बीकानेर - 334004

श्रमिक महिलाओं की समस्याएं और सामाजिक दायित्व

अजय कुमार बरनवाल

भारत में श्रमिक महिलाओं की समस्या आज राष्ट्रीय-स्तर पर एक विषम चुनौती का विषय बन चुकी है। आज तक हमने इस विकराल समस्या को नजरअंदाज किया है। जबकि इस पुरुष प्रधान समाज में महिला पुरुष के साथ कदम से कदम मिलाकर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कूद पड़ी है। वह हर क्षेत्र में रात-दिन काम करके देश के आर्थिक विकास में अपना अमूल्य योगदान देकर स्वयं का वर्चस्व स्थापित करने के लिए सतत प्रयत्नशील है। आधुनिक काल की महिला जहां एक तरफ "स्वर्गादपि गरीयसी" कहने के मूल में अपने परिवार की अधिष्ठात्री होना स्वीकार करती है, वहीं वह दूसरी तरफ अर्थोपार्जन द्वारा अपने पारिवारिक गौरव में अभिवृद्धि की पूरजोर कोशिश भी करती है। तब प्रश्न उठता है कि आज श्रमिक महिलाएं पुरुषों के समानान्तर या उससे कहीं अत्यधिक श्रम करने के बावजूद निरन्तर उपेक्षा एवं एवं व्यक्तित्वहीनता की शिकार क्यों बनी हुई? वह बंधुआ-मजदूरों की भांति जीवन-यापन करने के लिए मजबूर क्यों ? वह अपने अधिकारों को प्राप्त करने में असहाय होकर पुरुषों पर आश्रित क्यों हो चली हैं? कारण स्पष्ट है- शिक्षा के साथ सामाजिक पिछड़ापन एवं पुरुषों की तुलना में श्रमिक महिलाओं के साथ शोषित सौतेलेपन का व्यवहार।

राष्ट्र की संरचनात्मक क्रान्ति में महिला का स्थान सर्वोपरि है। वह न केवल बच्चों के विकास के लिए उत्तरदायी है अपितु राष्ट्र के समाजिक जीवन में भी उसकी रचनात्मक भूमिका अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। भारत जैसे विकासशील देश में महिलाएं नि:संदेह उत्पादक शक्ति की पर्याय हैं। भारत की कुल 84 करोड़ जनसंख्या में महिलाओं का प्रतिशत लगभग 40 करोड़ बैठता है। यदि बालिकाओं एवं वृद्धाओं की संख्या को इसमें से अलग कर दिया जाए तो लगभग 23 करोड़ महिलाएं ऐसी हैं जो श्रमदान करने के योग्य ठहरती हैं। इनमें से मात्र 3 करोड़ महिलाएं ही शहरी हैं जबकि 20 करोड़ महिलाएं ग्रामीण परिवेश में रहकर राष्ट्र के सकारात्मक आर्थिक विकास में अपनी श्रमशक्ति द्वारा सृजनात्मक वृद्धि को प्रश्रय देने में संलग्न हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार जहां 1981 से 91 के दशक में रोजगार प्राप्ति के क्षेत्र में पुरुषों की संख्या 22.8 प्रतिशत बढ़ी है, वहीं महिलाओं की संख्या में 43.2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसी प्रकार भारत में कार्यशी[ल] महिलाओं की संख्या के बारे में मान्यता प्राप्त आंकड़े बताते [हैं] कि 6.5 प्रतिशत महिलायें ही नियमित रोजगार में लगी हुई [हैं] जबकि 93.5 प्रतिशत महिलायें स्वरोजगार में संलग्न हैं।

महिलाओं में श्रम करने की प्रवृत्ति होती है। किन्तु ग्रामी[ण] महिलाओं ने अनेक कारणों से जहां एक तरफ अपने घर में [...] महिलाओं द्वारा किए गए कार्य जैसे, भोजन पकाना, कपड़े धोन[ा] चूल्हा चौका करना, झाड़ू पोंछा लगाना, पानी भरना इत्यादि का[र्यों] को आर्थिक आय आकलन में शामिल न करके गौण मान लि[या] है, वहीं दूसरी तरफ केंद्र या राज्य सरकार भी महिला श्रमि[कों] की समस्याओं के समाधान के नाम पर नगण्य मात्रा में विनियो[ग] करती हैं। परिणामस्वरूप पुरुष-श्रम की तुलना में इन महि[ला] श्रमिकों को समाज के उत्पाद का न्यूनतम अंश ही प्राप्त हो पा[ता] है।

राष्ट्र के गंभीरतम समस्याओं में से एक महिला श्रमिकों [की] समस्या से संबंधित निम्न परिणाम देखने को मिले हैं :

पुरुषों की तुलना में महिला-श्रम का शोषण :- महिला[ओं] को पुरुषों की अपेक्षा अनेक कार्यों में अत्यधिक श्रम क[रना] लगभग उसके जीवन का एक पर्याय बन चुका है। श्रमि[क] महिलाओं के श्रम का शोषण सबसे अत्यधिक लघु, कुटीर [एवं] घरेलू उद्योगों में किया जाता है। चाहे बीड़ी उद्योग हो, [या] अगरबत्ती उद्योग, प्रत्येक जगह महिलाओं से पुरुषों की तुल[ना] में न्यूनतम मजदूरी पर अधिकतम श्रम का उपयोग लिया जा[ता] है। इन उद्योगों में महिलाओं के लिए कार्य के घन्टे निश्चित न[हीं] होते हैं। जबकि किसी भी श्रमिक को अतिरिक्त पारिश्रमिक [दिए] बिना 8 घन्टे से अत्यधिक काम लेना श्रम-कानून की दृष्टि[को]ण से अपराध माना गया है। फिर भी प्राय: देखा जाता है कि ई[ंट] भट्टे की चिमनियों या कालोनी की बहुमंजिली इमारतों पर क[ाम] करने वाली महिलाओं से 10 से 13 घन्टे प्रतिदिन काम लिया ज[ाता] है। इस प्रकार हमारे देश में महिला श्रमिक वर्ग घोर शोषण [एवं] दोहन की शिकार है।

वेतन-भुगतान संबंधी विषमता : श्रमिक महिलाओं [की] समस्याओं के अंतर्गत वेतन भुगतान संबंधी विषमता आज

एक प्रमुख समस्या बनी हुई है। जबकि समान पारिश्रमिक अधिनियम-1976 के अंतर्गत महिला श्रमिकों के लिए पुरुषों के ही समान पारिश्रमिक का प्रावधान है। संविधान के अनुछेद 12(2) के अंतर्गत महिलाओं और पुरुषों को समान अधिकार प्रदान करते हुए कहा गया है कि "लिंग के आधार पर कोई नागरिक किसी नौकरी के लिए अपात्र नहीं समझा जायेगा और न ही उसके साथ इस आधार पर भेदभाव किया जायेगा।" परन्तु व्यावहारिक धरातल पर प्राय: श्रमिक महिलाओं को पुरुषों की तुलना में अपेक्षाकृत लगभग एक तिहाई कम मजदूरी ही जाती है। ईंट-भट्ठे पर काम करनेवाली दक्षिणी बिहार के आदिवासी पुरुषों को जहां 15 से 20 रुपये मजदूरी दी जाती है, वहीं महिलाओं को 12 से 14 रुपये के बीच मजदूरी दी जाती है। जबकि न्यूनतम पारिश्रमिक अधिनियम के अनुसार इन श्रमिकों को 22 रुपये प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरी देने का कानूनी प्रावधान है। परन्तु व्यावहारिक स्तर पर इस कानून का कहीं भी पालन नहीं किया जाता है।

श्रमिक महिलाओं के बच्चों का अनिश्चित भविष्य : चूंकि श्रमिक महिलाएं दूर दराज के गांवों से संक्रमण कर आस-पास के विभिन्न क्षेत्रों में छोटे-छोटे उद्योग, फैक्टरी, मिल आदि में मालिकों एवं ठेकेदारों की मनमानी शर्तों पर कार्य करने के लिए बाध्य होती हैं। अत: इनके पास अपने बच्चों के लिए समुचित समय का भी अभाव होता है। ये कामकाजी महिलाएं अपने बच्चों को काम पर साथ में ले जाती हैं और बगल में बच्चों को या तो बैठी देती हैं या सुलाकर अपने काम में लग जाती हैं। फलस्वरूप इनके बच्चों का शिक्षा से दूर-दूर का भी संबंध नहीं हो पाता है। गरीबी, अशिक्षा इनके जीवन की विशेषता होती है। जिससे श्रमिक महिलाओं के बच्चों का भविष्य प्राय: अंधकारमय हो जाता है और आगे चलकर ये बच्चे अन्तत: बाल श्रमिक के रूप में उन्हीं कार्यों में लग जाते हैं।

दोहरी जिम्मेदारी : श्रमिक महिलाओं को जहां एक तरफ दिहाड़ी मजदूरी पर घर के बाहर काम करना पड़ता है वहीं कार्य समाप्ति के बाद घर लौटने पर घरेलू कार्यों को भी करना पड़ता है। बच्चों का पालन-पोषण, चौका-बर्तन, सफाई, इत्यादि कार्य श्रमिक महिलाओं द्वारा किया जाता है। पुरुष वर्ग आज भी इन गृह कार्यों को महिलाओं का कार्य मानता है। फलस्वरूप कामकाजी महिलाओं को समाज में अपनी दोहरी-जिम्मेदारी से उबर पाना बहुत ही कठिन होता है।

अन्य : एक तरफ जहां आर्थिक दृष्टि से कमजोर होने के कारण इन श्रमिक महिलाओं को अपना श्रम बेचने के लिए विवश होना पड़ता है वहीं दूसरी तरफ कामकाजी होने के बाद भी ये श्रमिक महिलाएं आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र नहीं हो पाती हैं। उसे अपनी सम्पूर्ण आय का लेखा-जोखा अपने पति या परिवार के अन्य बुजुर्ग सदस्य को देना पड़ता है।

कुछ श्रमिक महिलाओं के लिए नौकरी पेशा एक मजबूरी होने के साथ-2 अभिशाप भी होता है। कई परिवारों में प्राय: देखा गया है कि जब पुरुष सदस्य बेरोजगार होते है या उनकी मजदूरी अत्यन्त कम होती है, या पति शराबी, जुआरी, एवं कुमार्गी होता है तो अपने बच्चों की परवरिश, स्वास्थ्य, शिक्षा इत्यादि का सम्पूर्ण दायित्व इन महिलाओं पर आ जाता है। परन्तु दिहाड़ी मजदूरी अत्यन्त कम होने के कारण इन्हें समुचित सम्पूर्ण स्वास्थ्य सुविधायें नहीं मिल पाती हैं, फलस्वरूप असमय ही इन्हें मृत्यु को प्राप्त होना पड़ता है।

इसी प्रकार नौकरी पेशा करने वाली श्रमिक महिलायें चरित्र के प्रति सदैव संदेह की दृष्टिकोण से देखी जाती हैं। उनके लिए ड्यूटी करना तो और भी कठिन होता है। वे कार्य करने का निर्णय लेने में स्वतंत्र भी नहीं होती हैं। विवाह पूर्व जहां माता-पिता रूढ़िवादी परम्पराओं को लोक-लाज के भय से तोड़ना नहीं चाहते, वहीं विवाह के उपरान्त घर से बाहर नौकरी करना ससुराल वालों के ऊपर निर्भर करता है।

महिला श्रमिक कल्याण और सामाजिक दायित्व : यह विचित्र किन्तु सत्य है कि महिलाएं ही पुरुषों का निर्माण करके वस्तुत: समाज और राष्ट्र का निर्माण करती हैं। इतिहास साक्षी है कि जहां अनेक महापुरुषों के निर्माण में उनकी माताओं (नारी) की प्रमुख भूमिका रही है, वहीं राष्ट्र के रचनात्मक आर्थिक विकास में महिला श्रमिकों का विशिष्ट योगदान भी वंदनीय रहा है।

भारत विश्व का एक ऐसा अकेला लोकतांत्रिक राष्ट्र है, जहां 100 से भी अधिक श्रम कानून बनाये जा चुके हैं। इन श्रम कानूनों का उद्देश्य श्रमिक वर्ग महिला और पुरुष के लिए न्यूनतम अधिकारों का कानूनी प्रावधान एवं शोषण करने वाले नियोक्ताओं से उनकी रक्षा करना है। महिला श्रमिकों के कल्याण के लिए भी सरकार ने कुछ कानून अलग से बनाये हैं। अनेक योजनाओं को लागू भी किया गया है। लेकिन लगभग प्रत्येक सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति की कमी के कारण ही आज तक न तो प्रभावी ढंग से उन योजनाओं को क्रियान्वित किया जा सका है और न ही कड़ाई के साथ महिला श्रमिक कानूनों का कल्याणार्थ लागू ही किया जा सका है। आज भी महिला श्रमिक अपनी समस्याओं के

समाधान के लिए देश की प्रजातांत्रिक सरकार की ओर निहार रही है। शायद, किसी क्षण सरकार का ध्यान इन समस्याओं की ओर खिच जाए और महिला श्रमिकों पर होने वाले शोषण एवं दमन चक्र से इन्हें निजात मिल सके।

जहां तक महिला श्रमिकों की समस्याओं के समाधान से संबंधित सामाजिक दायित्व का प्रश्न है, महिला श्रमिक समाज की प्रत्येक आर्थिक क्रिया-प्रतिक्रिया, कर्तव्य और अधिकार की सहभागी है। सामाजिक जीवन के आर्थिक ढांचे को सुव्यवस्थित बनाये रखने के लिए यह आवश्यक हो गया है कि समय पूर्व इन्हें समानता का संवैधानिक अधिकार प्रदान किया जाए। तभी हम सकारात्मक स्थायित्वपूर्ण आर्थिक विकास की मंजिल को छू सकने में सफल हो पायेंगे।

मजदूरी की व्याप्त असमानता को दूर करने के लिए पुरुषों के समान वेतन संबंधी भुगतान हेतु समान पारिश्रमिक अधिनियम (1976) को महिला कल्याण के दृष्टिकोण से दृढ़ता से लागू करना होगा। साथ-2 महिला श्रमिकों द्वारा किए गये अतिरिक्त श्रम कार्य के बदले उन्हें अतिरिक्त पारिश्रमिक की भी व्यवस्था करनी होगी। मालिकों ठेकेदारों एवं साथ में सरकार को भी चाहिए कि वे श्रमिक महिलाओं के बच्चों की शिक्षा के लिए कोई समुचित कारगर कदम उठायें, ताकि उनके बच्चे शिक्षित एवं सुसंस्कारित बन सकें।

सामाजिक कुरीतियों, रूढ़िवादी परम्पराओं से बाहर निकालकर महिला श्रमिकों को पूर्ण सुरक्षा प्रदान करने की भी आवश्यकता है। जोखिम भरे कामों में अपंग होने पर या मृत्यु को प्राप्त होने पर उन मालिकों का यह नैतिक दायित्व बन जाता है कि वे उस श्रमिक महिला के परिवार के जीवन-यापन का सम्पूर्ण व्यय भार वहन करें।

इसी प्रकार समाज का यह भी दायित्व बनता है कि वह श्रमिक महिलाओं के साथ बलात्कार, अपहरण इत्यादि यौन-शोषण कुकृत्यपूर्ण घटनाओं को रोकने की कोशिश करें। इस मामले में जो भी व्यक्ति दोषी पाया जाए उसे कड़ा से कड़ा दंड दिया जाए। इस मामले में सरकार के साथ-2 समाज के नवयुवकों को स्वयं आगे आना चाहिए ताकि इन श्रमिक महिलाओं को समाज में एक प्रतिष्ठापरक स्थान मिल सके। इन असंगठित श्रमिक महिलाओं को संगठित करने की भी आवश्यकता है जिससे उनमें अपने अधिकारों के प्रति कर्तव्य बोध की भावना जागृत हो सके। वह न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 में प्रसूति सुविधा अधिनियम इत्यादि श्रम कानूनों की प्रावधानों की भी जानकारी प्राप्त कर सकें।

सिद्धान्ततः सरकार और समाज के कर्णधारों ने महिला श्रमिकों से संबंधित विभिन्न ज्वलन्त समस्याओं के प्रति अपनी चिन्ता व्यक्त की है। परन्तु सिद्धान्त रूप से इस समस्या को स्वीकारने के साथ-2 बेहतर होता कि "महिला श्रमिक कल्याण" के एक झण्डे के तले इकट्ठा होकर व्यवहार में भी एक नये सिरे से कल्याणार्थ किसी ठोस कार्यक्रम को मूर्तस्वरूप प्रदान करने के लिए शपथ ग्रहण की जाती ताकि ये श्रमिक महिलाएं शिक्षित, संगठित एवं निर्भिक होकर अभिशप्त जीवन-यापन को त्यागकर कलात्मक जिन्दगी जीने की तरफ उन्मुख होतीं।

द्वारा श्री जे0पी0 बरनवाल
नदौली, लार, देवरिया। (उ0प्र0)
पिन कोड-274502

पृष्ठ 29 का शेष

वाले समान की आवश्यकता ने भी नीम पर कहर बरपाया है। जो नये वन लगाये जायें- उनमें भी नीम के वृक्ष लगाये जाने चाहिए।

नीम ऊंचाई तक जाने वाला काफी छायाप्रद वृक्ष है इसकी समुचित रक्षा तथा बढ़ावा नागरिक रूप में हमारा दायित्व है। ग्राम्य संस्कृति में इसकी पुनर्स्थापना आज महत्ती आवश्यकता है। वैसे नीम को पवित्र वृक्ष मानकर इसकी अर्चना भी स्वीकार की गयी है। नीम अप्रैल से पतझड़ के बाद नये रूप-स्वरूप से खिलता है तथा बाद में जुलाई से सितंबर माह तक इसकी निबोलियां आती हैं। इस पेड़ पर पक्षी या जानवर भी आसानी से खोखा नहीं बना पाते- क्योंकि यह सख्त तथा कड़वा होता है। इसलिए यह घरों के आंगन तक में शोभा पाता है। नीम के गुण एक नहीं हजार हैं, आवश्यकता इन्हें जानने और समझने की है।

1958, पं. शिवदीन का रास्ता,
जयपुर - 302003 (राज0)

महावृक्ष पुरस्कार

1993 के वनमहोत्सव के अवसर पर, पर्यावरण एवं वन मंत्री श्री कमलनाथ ने नए पुरस्कारों को शुरू करने की घोषणा की है। ये पुरस्कार विभिन्न प्रजातियों में से उत्कृष्ट वृक्षों की पहचान व उनके संरक्षण के लिए दिए जाएंगे। इन वार्षिक पुरस्कारों को महावृक्ष पुरस्कार कहा जाएगा।

प्रत्येक वर्ष उन पुरस्कारों के लिए वृक्षों की छह प्रजातियों का चयन किया जाएगा तथा देश के सभी भू-जलवायु क्षेत्रों को पुरस्कार का दावा करने का बराबर का अवसर दिया जाएगा। सर्वाधिक चौड़े घेरे वाले व स्वस्थ वृक्ष को पुरस्कार दिया जाएगा तथा उसके निकट पट्टिका लगा दी जाएगी जिस पर पुरस्कार का उल्लेख होगा। उस भूखंड के स्वामी को जिस पर वृक्ष लगा है, 25,000 रु0 का पुरस्कार दिया जाएगा।

वर्ष 1993 के लिए जिन प्रजातियों को चुना गया है वे हैं टीक, नीम, पीपल, देवदार, शीशम और खेजरी।

सभी पुरस्कृत वृक्षों के चित्रों व विवरण का ब्यौरा रखा जाएगा तथा संरक्षण अनुसंधान व जागरुकता-दृष्टि से उन का ध्यान रखा जाएगा। नामांकन पत्र तैयार कराए जा रहे हैं जो सभी जिलाधीशों, राज्य वन विभागों और केन्द्रीय पर्यावरण तथा वन मंत्रालय से प्राप्त किए जा सकते हैं।

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : (डी (डी एल) 12057/93
पूर्व भुगतान के बिना डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D (DL) 12057/93
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
वीरेन्द्रा प्रिंटर्स, हरध्यान सिंह रोड, करोल बाग
नई दिल्ली-110005 द्वारा मुद्रित